[2019] 12 एस. सी. आर 1125

भारत का संघ

वी.

महाराष्ट्र राज्य और ओ. आर. एस.

(समीक्षा याचिका (सी. आर. एल.) 2018 का सं. 228)

में

(2018 की आपराधिक अपील No.416)

अक्टूबर 1,2019

[अरुण मिश्रा, एम. आर. शाह और बी. आर. गवई, जे. जे.]

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989-डॉ. सुभाष काशीनाथ मामले में उच्चतम न्यायालय

लोक सेवक की गिरफ्तारी नियुक्ति प्राधिकारी की मंजूरी के बाद और गैर-लोक सेवक के मामले में एस. एस. पी. की मंजूरी के बाद ही हो सकती है; (iv) यह पता लगाने के लिए कि क्या आरोप 1989 के अधिनियम के तहत एक मामला बनाते हैं और वे तुच्छ/प्रेरित नहीं हैं-की समीक्षा-आयोजितः चूंकि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों ने लंबे समय तक पीड़ा झेली है;

सुरक्षात्मक भेदभाव की परिकल्पना यू/Art.15 और 1989 अधिनियम के तहत की गई है ताकि उन्हें समान बनाया जा सके-1989 अधिनियम के तहत अपराध हैं

संज्ञेय-विवादित निर्देश गिरफ्तारी के अधिकार पर सवार होते हैं-अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को दूसरों की तुलना में और विशेष रूप से तथाकथित उच्च जातियों/सामान्य श्रेणी की तुलना में नुकसानदेह स्थिति में रखना विधायिका के लिए खुला नहीं है-जो विधायिका वैध रूप से नहीं कर सकती है, उसे व्याख्यात्मक प्रक्रिया द्वारा नहीं किया जा सकता है।

अदालतें झूठी रिपोर्ट दर्ज करने के लिए, व्यक्ति की जाति नहीं है

कारण यह मानव विफलता के कारण है न कि जाति के कारण

कारक-कुछ झूठे मामले हो सकते हैं और वे न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप के लिए आधार हो सकते हैं। s.482, सी. आर. पी. सी., लेकिन इस तरह के दुरुपयोग के कारण कानून को बदला नहीं जा सकता-47,000 से अधिक मामले थे

1989 के अधिनियम के तहत 2016 में पंजीकृत-संख्या चिंताजनक है, और यह नहीं कहा जा सकता है कि यह अधिनियम के दुरुपयोग के कारण है-यह कहना कि अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति द्वारा दर्ज की गई रिपोर्ट उप-राज्यपाल द्वारा प्रारंभिक जांच के बाद ही दर्ज की जाएगी। एस. पी., जबकि Cr.PC के तहत एक शिकायत दर्ज की गई

संज्ञेय अपराध से संबंधित रिपोर्ट तुरंत दर्ज की जानी चाहिए, इसका मतलब यह होगा कि उच्च जाति द्वारा रिपोर्ट तुरंत दर्ज की जानी चाहिए और तुरंत गिरफ्तारी की जानी चाहिए और इस प्रकार, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के साथ किए गए सुरक्षात्मक भेदभाव का विरोध किया जाएगा, जैसा कि यू/आर्ट्स में परिकल्पना की गई है। 15 , 17 & 21- दिशानिर्देश (iii), (iv) एस के प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए जारी किए गए प्रतीत होते हैं। 18 , 1989 अधिनियम, जबकि पर्याप्त सुरक्षा उपाय उद्देश्यपूर्ण द्वारा प्रदान किए गए हैं

एम. पी. बनाम राज्य में उच्चतम न्यायालय द्वारा व्याख्या। आर. के. बालोथिया

[1995] 1 एस. सी. आर. 897-लोक सेवक को गिरफ्तार करने के लिए नियुक्ति प्राधिकरण की अनुमति की बिल्कुल भी सांविधिक रूप से परिकल्पना नहीं की गई है और यह विधायी रंग का अधिदेश है जो न्यायालयों के लिए निर्धारित नहीं है-यदि सीमा पर, प्राधिकरण की नियुक्ति का अनुमोदन।

मामला-प्राधिकारी/एस. एस. पी. की नियुक्ति करके गिरफ्तारी की मंजूरी के रूप में। अनुमोदन नहीं किया गया है, मजिस्ट्रेट द्वारा कारणों को दर्ज करने और जांच करने का निर्देश परिणामस्वरूप रद्द हो जाता है-निर्देश संख्या। (iii), (iv) उच्चतम न्यायालय द्वारा जारी किया गया-परिणामस्वरूप, निर्देश सं। (v) यह भी गायब हो जाता है-भारत का संविधान-कला। 15 , 17 , 21 और 142-दंड प्रक्रिया संहिता, 1973-एस. एस. 2 (ग) 41,197,438 और 482-अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अनुसूचित जनजातियों की रोकथाम) अत्याचार) नियम, 1995 - आर. 7 (2)-अनुसूचित जाति और अनुसूचित

जनजाति (अत्याचार निवारण) संशोधन नियम, 2016।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (रोकथाम)

अत्याचार) अधिनियम, 1989 - एस. 18-आयोजितः एस का प्रावधान। 18 इसे भारत के Art.21 संविधान-Art.21 का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता है। भारत का संविधान-Art.142-डॉ. सुभाष काशीनाथ महाजन बनाम में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जारी विवादित दिशानिर्देशों/निर्देशों के तहत शक्तियों का प्रयोग। महाराष्ट्र राज्य ने [2018] 4 एस. सी. आर. 877 के रूप में सूचित किया, अन्य बातों के साथ-साथ यह निर्देश दिया कि 1989 के अधिनियम के तहत,

लोक सेवक नियुक्ति प्राधिकारी के अनुमोदन के बाद ही हो सकता है; गैर-लोक सेवक के मामले में एस. एस. पी. द्वारा अनुमोदन के बाद और

Dy.S.P द्वारा प्रारंभिक जांच के लिए यह पता लगाने के लिए कि क्या आरोप अधिनियम के तहत एक मामला बनाते हैं और वे तुच्छ/प्रेरित नहीं हैं-आयोजितः भारत संघ के लिए आरक्षित क्षेत्र पर अतिक्रमण करने वाले निर्देश v.

महाराष्ट्र राज्य

विधायिका और सुरक्षात्मक की अवधारणा के खिलाफ हैं

कला के तहत दलित वर्गों के पक्ष में भेदभाव। 15 (4) और अनुच्छेद के तहत शक्तियों के प्रयोग के लिए उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित मापदंडों के भीतर भी अस्वीकार्य है। 142 - विवादित निर्देश याद किए गए-अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989।

न्यायिक समीक्षा-दिशानिर्देशों का दायरा और जारी करना

चर्चा की।

पुनरीक्षण याचिकाओं को अनुमति देते हुए न्यायालय ने

पकड़नाः 1.1 अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 की धारा 18 के प्रावधान को अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं कहा जा सकता है। चूंकि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों ने लंबे समय तक पीड़ा झेली है, इसलिए सुरक्षात्मक भेदभाव की परिकल्पना की गई है। भारत के संविधान का अनुच्छेद 15 और 1989 के अधिनियम के प्रावधान उन्हें समान बनाने के लिए। अत्याचार अधिनियम के तहत सभी अपराध संज्ञेय हैं। विवादित निर्देशों ने सवारों को गिरफ्तार करने का अधिकार दिया। मौजूदा प्रावधानों के अनुसार, नियुक्ति प्राधिकरण के पास मंजूरी देने या रोकने की कोई शक्ति नहीं है

समाज। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के वर्ग अपमान और दुर्व्यवहार का सामना कर रहे हैं, और वे सदियों से सामाजिक रूप से बहिष्कृत हैं। [पारस 19,37,38 और 41] [1150 ईसा पूर्व; 1167-बी-सी; 1168-डी-ई] 1.2 गरिमा के साथ जीने का अधिकार है और गरिमा के साथ मरने का भी अधिकार है। अनुच्छेद 21 अनुदान के तहत मानवाधिकारों के उल्लंघन के लिए

क्षतिपूर्ति उन सहवर्ती में से एक है जिसने पाया है

मुआवजे के प्रावधानों में वैधानिक अभिव्यक्ति,

1989 के अधिनियम के प्रावधानों के तहत अपराध किए जाने की स्थिति में भुगतान किया जाता है। एक अच्छी प्रतिष्ठा व्यक्तिगत सुरक्षा का एक तत्व है और संविधान द्वारा जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति के आनंद के अधिकार के साथ समान रूप से संरक्षित है। इसलिए, यह [2019] 12 एस. सी. आर. रहा है।

नागरिकों या अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्ग। अनुच्छेद 15 (5) के तहत अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों के अलावा निजी शैक्षणिक संस्थानों, चाहे राज्य द्वारा सहायता प्राप्त हो या बिना सहायता प्राप्त, सहित शैक्षणिक संस्थानों में उनके प्रवेश के संबंध में और सुरक्षा प्रदान की जाती है। ऐतिहासिक रूप से वंचित समूहों को विशेष सुरक्षा और सहायता दी जानी चाहिए ताकि उन्हें उनकी गरीबी और निम्न सामाजिक स्थिति से ऊपर उठाया जा सके। द. विधायिका को ऐसे अधिकारियों को अनुच्छेद 15 (4) के तहत संरक्षित करने का प्रयास करना होगा, ताकि दूसरों के लिए उपलब्ध सामान्य कानून के प्रावधानों की तुलना में उनसे अधिक कठोर प्रावधानों के साथ निपटा जा सके।

इससे ऐसी असमानता पैदा होगी जिसकी संवैधानिक रूप से अनुमति/परिकल्पना नहीं है। यह अनिवार्य संवैधानिक प्रावधानों को नकारने की कार्रवाई होगी जो संवैधानिक योजना द्वारा समर्थित नहीं हैं, बल्कि यह अनिवार्य संवैधानिक संरक्षण के खिलाफ होगी। यह विधायिका के लिए खुला नहीं है कि वह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को नुकसान में डाले

दूसरों की तुलना में और विशेष रूप से तथाकथित उच्च जातियों/सामान्य श्रेणी के लिए स्थिति। अतः उनके साथ भेदभाव नहीं किया जा सकता है।

जो विधायिका वैध रूप से नहीं कर सकती, वह अदालतों द्वारा व्याख्यात्मक प्रक्रिया द्वारा नहीं किया जा सकता है। विशेष कानून, अर्थात 1989 का अधिनियम, अधिनियमित किया गया है और इसके प्रावधानों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए 2016 में इसमें संशोधन भी किया गया है। मुकदमों की त्वरित सुनवाई के लिए विशेष अभियोजक प्रदान किए जाने हैं। पीड़ितों के पुनर्वास, गवाहों की सुरक्षा और उससे जुड़े मामलों के लिए भी प्रोत्साहन प्रदान किए जाते हैं। [पारस 45,47 और 48] [1170-सी-ई, जी; 1171-ए-ई]

1.3 ऐसा कोई अनुमान नहीं है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्य इसका दुरुपयोग कर सकते हैं।

एक वर्ग के रूप में कानून के प्रावधान और इसका सहारा उच्च जाति के सदस्य या अभिजात वर्ग के सदस्य नहीं लेते हैं। झूठी रिपोर्ट दर्ज करने के लिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि किसी व्यक्ति की जाति इसका कारण है। यह मानव विफलता के कारण है न कि भारत संघ v के कारण।

जाति कारक। जाति को इस तरह के कृत्य के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। दूसरी ओर, पिछड़ेपन के कारण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों में शायद ही रहने का साहस होता है यहाँ तक कि एक प्रथम सूचना रिपोर्ट, बहुत कम, एक झूठी। यदि यह गलत/अप्रमाणित पाया जाता है, तो यह दोषपूर्ण जांच या जाति कारक के बावजूद मानवीय विफलताओं सहित अन्य विभिन्न कारणों से हो सकता है। कुछ ऐसे मामले हो सकते हैं जो झूठे हो सकते हैं जो न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप का आधार हो सकते हैं, लेकिन इस तरह के दुरुपयोग के कारण कानून को बदला नहीं जा सकता है। ऐसी स्थिति में, Cr.PC की धारा 482 के तहत कार्यवाही में ध्यान रखा जा सकता है। भारत सरकार की ओर से गृह मंत्रालय के राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो के आंकड़ों की ओर इशारा किया गया है जो इंगित करता है कि 47,000 से अधिक मामले दर्ज किए गए थे।

1989 के अधिनियम के तहत वर्ष 2016। संख्या चिंताजनक है,

तुरंत पंजीकृत। इसका मतलब यह होगा कि उच्च जाति द्वारा एक रिपोर्ट तुरंत दर्ज की जानी चाहिए और गिरफ्तारी तुरंत की जा सकती है, जबकि 1989 के अधिनियम के तहत किसी अपराध के मामले में, यह एक शर्त होगी। यह सुरक्षात्मक के खिलाफ होगा अनुच्छेद 15,17 और 21 में संविधान के तहत परिकल्पित अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के साथ किया गया भेदभाव और उन्हें [2019] 12 एस. सी. आर. के जनादेश के अनुसार असमान, कुछ हद तक सहायक कार्रवाई के रूप में मानने के समान होगा।

उन्हें समान बनाने के लिए संविधान की आवश्यकता है। यह Cr.PC के तहत निर्धारित प्रक्रिया के विपरीत भी होगा और

इस न्यायालय द्वारा ललिता कुमारी में निर्धारित कानून के विपरीत। (iii) और (iv) में दिशा-निर्देश जारी किए गए प्रतीत होते हैं - 1989 के अधिनियम की धारा 18 में निहित प्रावधान; जबकि एक उद्देश्यपूर्ण प्रावधान द्वारा पर्याप्त सुरक्षा प्रदान की गई है।

एम. पी. बनाम राज्य के मामले में इस न्यायालय द्वारा व्याख्या। आर. के. बलोथिया। उच्चतम न्यायालय का सुसंगत दृष्टिकोण है कि यदि प्रथम दृष्टया मामला 1989 के अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधानों को आकर्षित करने वाला नहीं बनाया गया है, तो उस मामले में अग्रिम जमानत देने पर धारा 18 के तहत बनाया गया प्रतिबंध आकर्षित नहीं होता है। इस प्रकार, का दुरुपयोग

अधिनियम के प्रावधानों का उद्देश्य उपरोक्त निर्णय द्वारा ध्यान रखा जाना है। कर्तार सिंह में, इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने निर्धारित किया कि अग्रिम जमानत के उक्त अधिकार को छीनना भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं होगा। इस प्रकार, प्रथम दृष्टया यह प्रतीत होता है कि प्रावधानों के दुरुपयोग के मामले में, उल्लिखित निर्णय में पर्याप्त सुरक्षा उपाय प्रदान किए गए हैं।

ऊपर। इसके अलावा जारी किए गए निर्देश (iii) और (iv) मामलों की जांच में देरी कर सकते हैं। वर्ष 2016 में नियमों में किए गए संशोधन के अनुसार, अभियोजन की समय पर शुरुआत करने के लिए एक आरोप पत्र दायर किया जाना चाहिए। जारी किए गए निर्देश ये हैं -

अधिनियम/नियमों के तहत तैयार की गई समय पर योजना में देरी होने की संभावना है। [पारस 49-55] [1171-F-G; 1172-A-C, E-H; 1173-A-G]

पुनः में - नियुक्ति प्राधिकारी की मंजूरीः

1.5 लोक सेवकों के संबंध में, धारा 197, Cr.PC में निहित प्रावधान निषेध करके सुरक्षा प्रदान करते हैं। नियुक्ति प्राधिकारी की मंजूरी के बिना अपराध का संज्ञान और गिरफ्तारी के चरण में प्रावधान लागू नहीं किया जा सकता है। यह धारा 197, Cr.PC की भावना के खिलाफ होगा। धारा 41, Cr.PC प्रत्येक पुलिस अधिकारी को संज्ञेय अपराध के मामले में गिरफ्तारी करने के लिए अधिकृत करती है और Cr.PC की धारा 2 (c) के संदर्भ में संज्ञेय अपराध की परिभाषा ही वह है जिसके लिए पुलिस अधिकारी बिना वारंट के गिरफ्तार कर सकते हैं। यदि किसी व्यक्ति को यह आशंका होती है कि उसे गिरफ्तार किया जा सकता है, परेशान किया जा सकता है और झूठा फंसाया जा सकता है, तो वह धारा 482 के तहत प्राथमिकी को रद्द करने के लिए उच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकता है जैसा कि उड़ीसा राज्य बनाम में देखा गया है। देवेंद्र नाथ पाधी। भारत के सार्वजनिक संघ को गिरफ्तार करने के लिए नियुक्ति प्राधिकरण की अनुमति v.

नौकर की परिकल्पना बिल्कुल भी वैधानिक रूप से नहीं की गई है; यह एक ऐसे क्षेत्र का अतिक्रमण है जो विधायिका के लिए आरक्षित है। निर्देश एक विधायी रंग के जनादेश के बराबर है जो एक क्षेत्र नहीं है

न्यायालयों के लिए निर्धारित। यह निर्देश भेदभावपूर्ण है और कई कानूनी जटिलताओं का कारण बनेगा। यह तय करना कि क्या कोई अभियुक्त धारा 438 के तहत जमानत का हकदार है, यदि कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है या धारा 439 के तहत यह अदालत का कार्य है। गिरफ्तारी न करने के लिए प्राधिकारी नियुक्त करने का निर्देश हो सकता है

1989 के अधिनियम के प्रावधानों के साथ टकराव पैदा करना और वैधानिक आधार के बिना है। [पारस 56-59] [1173-H; 1174-A-E; 1175-A-B]

एक अपराधी, एक लोक सेवक हो सकता है, यह Cr.PC के सामान्य कानून का प्रावधान नहीं है कि नियुक्ति प्राधिकरण की अनुमति आवश्यक है। आई. पी. सी. और आई. डी. 1 के तहत गिरफ्तारी के मामले में किसी लोक सेवक को ऐसा कोई वैधानिक संरक्षण प्रदान नहीं किया गया है, क्योंकि 1989 के अधिनियम के तहत मामलों में इस तरह के राइडर को लागू करना भेदभावपूर्ण होगा। केवल आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन के मामले में, कुछ अपराध किया गया प्रतीत होता है, जिसमें मामला, मुकदमा चलाने के लिए मंजूरी की आवश्यकता हो सकती है और अन्यथा नहीं। यदि अधिनियम आधिकारिक कर्तव्य निर्वहन के दायरे से बाहर है, तो ऐसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं है। नियुक्ति प्राधिकारी संज्ञेय, गैर-जमानती अपराध और पुलिस अधिकारी द्वारा की गई जांच के मामले में प्राथमिकी पर नहीं बैठ सकता है। यह कार्य नियुक्ति प्राधिकारी को प्रदान नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसकी परिकल्पना Cr.P.C या 1989 के अधिनियम में नहीं की गई है। इस प्रकार, इस अधिकार को 1989 के अधिनियम के तहत मामलों के संबंध में लागू नहीं किया जा सकता है। आपराधिक जाँच में हस्तक्षेप करना नियुक्ति प्राधिकारी का कार्य नहीं है। यदि गिरफ्तारी के लिए नियुक्ति प्राधिकरण की मंजूरी को आवश्यक बनाया जाता है, तो अधिनियम का उद्देश्य ही विफल होने की संभावना है। विभिन्न जटिलताएँ उत्पन्न हो सकती हैं।

[पारस 60-62] [1175-C-F; 1176-C]

संदर्भ में: गैर-लोक सेवक के मामले में एसएसपी द्वारा गिरफ्तारी की मंजूरी:

9] 12 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

1.7 अन्य बातों के साथ-साथ, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, गिरफ्तारी से पहले एसएसपी की मंजूरी की आवश्यकता ऐसी स्थिति में आवश्यक नहीं है।

मामला भेदभावपूर्ण होगा और अधिनियम के तहत परिकल्पित सुरक्षात्मक भेदभाव के खिलाफ होगा। इसके अलावा, ऐसे कोई दिशा-निर्देश लागू नहीं हो सकते, जो विधायी हों। जब अग्रिम जमानत का कोई प्रावधान नहीं है, तो जाहिर तौर पर गिरफ्तारी करनी होगी। किसी भी अधिकारी की ईमानदारी पर संदेह किए बिना, इसे पदधारी के मधुर विवेक पर नहीं छोड़ा जा सकता है, चाहे वह कितना भी उच्च क्यों न हो। अभियुक्त की गिरफ्तारी के लिए एसएसपी की मंजूरी की ऐसी शर्त को अनिवार्य नहीं बनाया जा सकता था, यह 1989 के अधिनियम के तहत मामलों में मामले में देरी कर सकता है। [पैरा 63] [1176-डी-एफ] मजिस्ट्रेट से आगे हिरासत की अनुमति देने के कारणों की जांच करने की अपेक्षा करनाः

1.8 मजिस्ट्रेट द्वारा आगे हिरासत की अनुमति देने के लिए इस प्रकार दर्ज किए गए कारणों पर विचार किया जाना चाहिए। मंजूरी के मामले में

जाँच उपलब्ध नहीं है। निर्देश (iv) अन्य कारणों से कायम नहीं रह सकता है क्योंकि यह अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को उच्च जाति के सदस्यों द्वारा दर्ज की गई शिकायतों के मामले में प्रक्रिया के मामले में नुकसानदेह स्थिति में रखता है, क्योंकि बाद में ऐसी कोई प्रारंभिक जांच नहीं की जाती है। आवश्यक है, इस मामले को देखते हुए 1989 के अत्याचार अधिनियम के तहत अपराध दर्ज करने के लिए प्रारंभिक जांच करना आवश्यक नहीं होना चाहिए। दिशाएँ मैदान पर अतिक्रमण करती हैं

विधायिका के लिए और भारत के सुरक्षात्मक संघ की अवधारणा के खिलाफ आरक्षित।

महाराष्ट्र राज्य

संविधान के ए. ओ. के तहत दलित वर्गों के पक्ष में अनुकरण और इस न्यायालय द्वारा शक्तियों के प्रयोग के लिए निर्धारित मीटरों के भीतर भी अस्वीकार्यभारत के संविधान की धारा 142। नतीजतन, इस न्यायालय द्वारा जारी निर्देश संख्या (iv) को वापस ले लिया जाता है और परिणामस्वरूप वह निर्देश संख्या (v) भी गायब हो जाता है। [पारस 64-66] [117 177-A-F, H; 1178-A-B]

ललिता कुमारी बनाम। उत्तर प्रदेश सरकार (2014) 2 एस. सी. सी. 1: [2013] 14 एस. सी. आर. 713; कर्तार सिंह बनाम। पंजाब राज्य (1994) 3 एससीसी 569: [1994] 2 एस. सी. आर. 375; बचन सिंह बनाम पंजाब राज्य (1980) 2 एस. सी. सी. 684; केशवानंद भारती बनाम। केरल राज्य (1973) 4 एससीसी 225: [1973] पूरक। एससीआर 1; आई. आर. कोएल्हो बनाम टी. एन. राज्य (2007) 2 एस. सी. सी. 1: [2007] 1 एस. सी. आर. 706; भीम सिंह बनाम। भारत संघ (2010) 5 एस. सी. सी. 53; टी. एन. राज्य बनाम। केरल राज्य (2014) 12 एस. सी. सी. 696 [2014] 12 एस. सी. आर. 875; खडक सिंह बनाम

हिमाचल प्रदेश राज्य ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1295: [1964] एस. सी. आर. 332; ओल्गा टेलिस बनाम। बॉम्बे कॉर्पोरेशन ए. आई. आर 1986 एस. सी. 180: [1985] 2 पूरक। एस. सी. आर. 51-अनुसरण किया गया।

दलित मानवाधिकार और अन्य पर राष्ट्रीय अभियान v.

भारत संघ और अन्य। (2017) 2 एससीसी 432: [2016] 9

एससीआर 122; एम. पी. बनाम राज्य राम कृष्ण बालोतिया

(1995) 3 एससीसी 221: [1995] 1 एस. सी. आर. 897; सुब्रमण्यम स्वामी और अन्य। वी. राजू (2014) 8 एससीसी 390: [2014] 9 एससीआर 283; आसिफ हमीद और अन्य। वी. जम्मू और कश्मीर राज्य और अन्य। 1 (989) 2 पूरक। एससीसी 364: [1989] 3

एस. सी. आर. 19; इंडियन ड्रग्स एंड फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड बनाम

कामगार, इंडियन ड्रग्स एंड फार्मास्यूटिकल्स लिमिटेड।

निवारन समिली और अन्य। वी. गुजरात राज्य और अन्र। (2013) 12 एस. सी. सी. 226; हिच लाल तिवारी बनाम। कमला देवी (2001) 6 एससी 496 [2001] 1 पूरक। एस. सी. आर. 23; फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम। केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली, प्रशासक ए. आई. आर. 1981 एस. सी. 746: [1981] 2 एस. सी. आर. 516; पीपुल्स यूनियन

सिविल लिबर्टीज के लिए v. भारत संघ (2005) 2 एससीसी

436 [2005] 1 एससीआर 494; उमेश कुमार बनाम।

का राज्य।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

आंध्र प्रदेश (2013) 10 एस. सी. सी. 591 [2013] 14 एस. सी. आर. 212; किशोर समरिते बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य (2013) 2 एस. सी. सी. 398 [2012] 9 एस. सी. आर. 733; सुब्रमण्यम स्वामी बनाम। भारत संघ (2016) 7 एससीसी 221: [2016] 3 एस. सी. आर. 865; कैलास और अन्य। वी. महाराष्ट्र राज्य (2011) 1

एस. सी. सी. 793 [2011] 1 एस. सी. आर. 94; उड़ीसा राज्य बनाम। देबेंद्र नाथ पाधी (2005) 1 एस. सी. सी. 568 [2004] 6 पूरक। एस. सी. आर. 460-निर्भर। हरियाणा राज्य और अन्य। वी. भजन लाल और अन्य। (1992) 1 पूरक। एससीसी 335: [1990] 3 पूरक। एस. सी. आर. 259; सुप्रीम कोर्ट बार एसोसिएशन बनाम। भारत संघ (1998) 4 एस. सी. सी. 409 [1998] 2 एस. सी. आर. 795; प्रेम चंद गर्ग बनाम। आबकारी आयुक्त। ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 996 [1963] पूरक। एससीआर 885; ई. एस. पी. राजाराम बनाम भारत संघ (2001) 2 एस. सी. सी 186: [2001] 1 एससीआर 203; ए. आर. अंतुले बनाम आर. एस. नायक (1988) 2 एससीसी 602; बोन्क्या वी. महाराष्ट्र राज्य (1995) 6 एससीसी 447: [1995] 4 पूरक। एससीआर 89; एम. सी मेहता बनाम कमल नाथ (2000) 6 एस. सी. सी. 212: [2000] 1 पूरक। एस. सी. आर. 389; पंजाब राज्य बनाम राजेश स्याल (2002) 8 एससीसी 158: [2002] 3 पूरक। एस. सी. आर. 124; टेक्सटाइल लेबर एसोसिएशन बनाम। आधिकारिक परिसमापक (2004) 9 एससीसी 741: [2004] 3 एस. सी. आर. 1161; लक्ष्मीदास मोरारजी बनाम। बेहरोज दराब मदन

(2009) 10 एससीसी 425: [2009] 14 एससीआर 777; मनीष गोयल बनाम। रोहिणी गोयल (2010) 4 एससीसी 393 [2010] 2 एससीआर

414 ; ए. बी. भास्कर राव बनाम सीबीआई (2011) 10 एससीसी 259: [2011] 12 एस. सी. आर. 718; पंजाब राज्य बनाम। रफीक मसीह (2014) 8 एस. सी. सी. 883: [2014] 8 एस. सी. आर. 228; विशाखा बनाम. राजस्थान राज्य (1997) 6 एससीसी 241: [1997] 3 पूरक। एससीआर 404; एस. सी. चंद्र बनाम। झारखंड राज्य (2007) 8 एस. सी. सी. 279 [2007] 9 एस. सी. आर. 130; डॉ. सुभाष काशीनाथ महाजन बनाम। महाराष्ट्र राज्य (2018) 6 एस. सी. सी. 454: [2018] 4 एस. सी. आर. 877-संदर्भित।

स्टॉक वी. फ्रैंक जोन्स (टिपटन), 1978 (1) डब्ल्यू. एल. आर. 331

संदर्भित किया गया।

न्यायशास्त्र पर सैल्मंड, 12 वां संस्करण; स्वीट एंड

मैक्सवेल-संदर्भित।

भारत संघ v. महाराष्ट्र राज्य

मामला कानून संदर्भ

[2016] 9 एससीआर 122

उस पर भरोसा करें

पैरा

15

[2013] 14 एससीआर 713

पीछा किया।

पैरा

16

[1990] 3 पूरक। एससीआर 259

पैरा

17

संदर्भित किया गया है

[1995] 1 एससीआर 897

उस पर भरोसा करें

पैरा

18

[1994] 2 एससीआर 375

पीछा किया।

पैरा

19

[2014] 9 एससीआर 283

उस पर भरोसा करें

पैरा

20

[1998] 2 एससीआर 795

पैरा

21 (ए)

संदर्भित किया गया है

[1963] पूरक। एससीआर 885

पैरा

21 (बी)

संदर्भित किया गया है

[2001] 1 एससीआर 203

पैरा

21 (सी)

संदर्भित किया गया है

(1988) 2 एस. सी. सी. 602

संदर्भित किया गया है

पैरा

21 (डी)

पैरा

21 (ई)

[1995] 4 पूरक। एससीआर 89

संदर्भित किया गया है

[2000] 1 पूरक। एससीआर 389

पैरा

21 (एफ)

संदर्भित किया गया है

पैरा

21 (जी)

[2002] 3 पूरक। एससीआर 124

संदर्भित किया गया है

[2004] 3 एससीआर 1161

पैरा

21 (एच)

संदर्भित किया गया है

[2009] 14 एससीआर 777

पैरा

21 (i)

संदर्भित किया गया है

[2010] 2 एससीआर 414

पैरा

21 (जे)

संदर्भित किया गया है

[2011] 12 एससीआर 718

संदर्भित किया गया है

पैरा

21 (के)

[2014] 8 एससीआर 228

पैरा

21 (1)

संदर्भित किया गया है

[1997] 3 पूरक। एससीआर 404

संदर्भित किया गया है

पैरा

22

(1980) 2 एस. सी. सी. 684

पीछा किया।

पैरा

24

[1989] 3 एस. सी. आर 19

उस पर भरोसा करें

पैरा

25

[2007] 9 एससीआर 130

संदर्भित किया गया है

पैरा

25

[2006] 9 पूरक। एससीआर 73

उस पर भरोसा करें

पैरा

26

[2007] 12 एससीआर 1084

उस पर भरोसा करें

पैरा

27

(2013) 12 एससीसी 226

उस पर भरोसा करें

पैरा

28

[2018] 4 एससीआर 877

संदर्भित किया गया है

[1973] पूरक। एससीआर 1

पीछा किया।

पै

रा 30

[2007] 1 एससीआर 706

पीछा किया।

पै

रा 31

(2010) 5 एससीसी 53

पीछा किया।

पै

रा 32

[2014] 12 एससीआर 875

पीछा किया।

पै

रा 33

[1964] एससीआर 332

पै

रा 43

पीछा किया।

[2001] 1 पूरक। एससीआर 23

उस पर भरोसा करें

पै

रा 44

[1981] 2 एससीआर 516

उस पर भरोसा करें

पै

रा 44

[1985] 2 पूरक। एससीआर 51

पीछा किया।

पै

रा 44

[2005] 1 एससीआर 494

उस पर भरोसा करें

पै

रा 44

[2013] 14 एस. सी. आर. 212

उस पर भरोसा करें

पै

रा 45

[2012] 9 एससीआर 733

उस पर भरोसा करें

पै

रा 45

[2016] 3 एससीआर 865

उस पर भरोसा करें

पै

रा 45

[2011] 1 एससीआर 94

उस पर भरोसा करें

पै

रा 47

[2004] 6 पूरक। एससीआर 460

उस पर भरोसा करें

पै

रा 57

अंतर्निहित न्यायनिर्णयः पुनरीक्षण याचिका (आपराधिक)

2018 की आपराधिक अपील संख्या 416 में 2018 की संख्या 228

आपराधिक अपील में 20.03.2018 दिनांकित निर्णय और आदेश से

2018 का सं. 416

के साथ

समीक्षा याचिका (सी. आर. एल.) आपराधिक अपील में 2018 की संख्या 275 No.416

2018 से।

के. के. वेणुगोपाल, एजी, तुषार मेहता, एएसजी, आर. बालासुब्रमण्यम,

मोहन पराश्रण, विकास सिंह, गोपाल शंकरनारायणन, अशोक कुमार शर्मा, वरिष्ठ अधिवक्ता। , अंकुर तलवार, सुश्री श्रद्धा देशमुख, राज बहादुर यादव, निशांत गौतम, वर्धमान कौशिक, सुश्री प्रिया शर्मा, वरुण शर्मा, सुश्री शशि किरण, सतीश चंद्र, अर्जुन सैन, सुश्री पूजा धर, सुश्री गायत्री वर्मा, ऐश्वर्या केन, विशाल सिन्हा, परमानंद गौर, सुश्री बंदना सिंह, क्षितिज मुद्गल, बी. के. गौतम, श्रीमती अनिल कटियार, के. के. एल. गौतम, ए. के. सुमन, पी. एस. नेरवाल, राहुल मोहम्मद। , भरत राम, संजीव मल्होत्रा, के. परी वेंधन, नीलेश उके, शबरीश

सुब्रमण्यन, प्रभु रामसुब्रमण्यन, वाई. विलियम विनोथ कुमार, विष्णु यूनियन ऑफ इंडिया बनाम।

महाराष्ट्र राज्य

उन्नीकृष्णन, सुश्री दिशा वाडेकर, पारस नाथ सिंह, सिद्धार्थ, फुजैल अहमद अयूबी, रामेश्वर प्रसाद गोयल, वरिंदर कुमार शर्मा,

नचिकेता जोशी, प्रशांत भूषण, शिवेंद्र सिंह, करुवाकी मोहंती, डॉ. एम. एन. वर्मा, मनोज के. मिश्रा, उमेश दुबे, ज्योति मिश्रा, सुकुमार, सुशील करंजकर, के. एन. राय, कुमार परिमल, स्मारहर सिंह, गुंटूर प्रभाकर, बलराज दीवान, अविजीत भट्टाचार्जी, सुश्री उपमा श्रीवास्तव, अजय कुमार घोष, अभय कांत मिश्रा, पी. वी. सरवन राजा, जी. प्रकाश, जिष्णु एम. एल., श्रीमती प्रियंका प्रकाश, श्रीमती बीना प्रकाश, मोहन। कुमार, मनोज गोरकेला, संदीप कुमार सिंह, राम श्रीवास्तव,

सुश्री हेमलता के., संदीप कुमार सिंह (मेसर्स के लिए)। गोरकेला विधि कार्यालय), राज कमल, अरविंद कुमार शुक्ला, सुश्री रीतू शर्मा, निहाल अहमद, कुणाल यादव, सुश्री नीना शुक्ला, आलोक शुक्ला, देबाशीष मिश्रा, डी. महेश बाबू, डॉ. ए. पी. सिंह, वी. पी. सिंह, सुश्री गीता चौहान, सुश्री ऋचा सिंह, सुश्री प्रतिमा रानी, सदाशिव, शेखर कुमार, अरूप बनर्जी, एम. वाई. देशमुख, सुश्री मंजीत कृपाल, डॉ. के. एस. चौहान, अजीत कुमार।

एक्का, रवि प्रकाश, चांद किरण, एस. पी. सिंह, महफूज ए. नाज़की, पोलांकी गौतम, अधिवक्ता। उपस्थित दलों के लिए।

आवेदक व्यक्तिगत रूप से।

न्यायालय का निर्णय इसके द्वारा दिया गया था

अरुण मिश्रा, जे.

1. भारत संघ ने 2018 की आपराधिक अपील No.416 में इस न्यायालय द्वारा पारित 20.3.2018 के फैसले और आदेश की समीक्षा के लिए तत्काल याचिका दायर की है। इस न्यायालय ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम, 1989 (संक्षेप में '1989 का अधिनियम') के प्रावधानों पर विचार करते हुए निर्णय के पैराग्राफ 83 में दिशानिर्देश जारी किए हैं, जिन्हें यहां निकाला गया हैः

" 83. हमारे निष्कर्ष इस प्रकार हैंः

i) वर्तमान मामले में कार्यवाही स्पष्ट रूप से प्रक्रिया का दुरुपयोग है

अदालत और रद्द कर दिए जाते हैं।

(ii) अत्याचार अधिनियम के तहत मामलों में अग्रिम जमानत देने के खिलाफ कोई पूर्ण प्रतिबंध नहीं है यदि कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है या जहां न्यायिक जांच पर शिकायत प्रथम दृष्टया दुर्भावनापूर्ण पाई जाती है। हम पंकज डी. सुथार (ऊपर) और डॉ. एन. टी. देसाई (ऊपर) में गुजरात उच्च न्यायालय के दृष्टिकोण और दृष्टिकोण को मंजूरी देते हैं और बलोथिया में इस न्यायालय के फैसलों को स्पष्ट करते हैं।

(ऊपर) और मंजू देवी (ऊपर); [2019] 12 एस. सी. आर.

iii) के तहत मामलों में गिरफ्तारी के कानून के स्वीकृत दुरुपयोग को देखते हुए

अत्याचार अधिनियम, लोक सेवक की गिरफ्तारी केवल उसके बाद ही हो सकती है

नियुक्ति प्राधिकारी और गैर-लोक सेवक का अनुमोदन एस. एस. पी. द्वारा अनुमोदन के बाद जो उचित रूप से दिया जा सकता है।

दर्ज किए गए कारणों के लिए यदि आवश्यक माना जाता है तो मामले। इस तरह के कारण आगे की अनुमति के लिए मजिस्ट्रेट द्वारा जांच की जानी चाहिए

(iv) किसी निर्दोष के गलत निहितार्थ से बचने के लिए, प्रारंभिक जांच संबंधित डीएसपी द्वारा यह पता लगाने के लिए संचालित किया जा सकता है कि क्या

आरोप अत्याचार अधिनियम के तहत एक मामला बनाते हैं और कि

उपरोक्त दिशाएँ संभावित हैं। 2. इस न्यायालय ने समीक्षाधीन निर्णय पारित करते हुए,

अनुच्छेद 32 में वेद इस प्रकार हैः

" 32. इस न्यायालय से निष्क्रिय या नकारात्मक को अपनाने की उम्मीद नहीं है।

भूमिका निभाएँ और यदि अधिकारों का उल्लंघन किया जाता है तो दर्शक या दर्शक बने रहें

देखा गया। नए उपकरणों और रणनीतियों को तैयार करना आवश्यक है ताकि

अन्याय और मौलिक अधिकारों के उल्लंघन की जांच करने के लिए। नहीं।

प्रक्रियात्मक तकनीकीता प्रवर्तन के रास्ते में आ सकती है

मौलिक अधिकार 1. इस न्यायालय के असंख्य निर्णय हैं।

जहाँ इस दृष्टिकोण को अपनाया गया है और इसके साथ निर्देश जारी किए गए हैं मौलिक अधिकारों को लागू करने का दृष्टिकोण जो कभी-कभी हो सकता है

प्रकृति में विधायी माना जाता है। इस तरह के निर्देश निश्चित रूप से कर सकते हैं

2. एक उपयुक्त विधान अधिनियमित होने तक जारी किया जाए और जारी रखा जाए। इस न्यायालय की भूमिका केवल विवाद निपटान से परे है और

निश्चित रूप से ऐसे निर्देश जारी किए जा सकते हैं जो सीधे संघर्ष में न हों

वैध कानून 3 के साथ। कानून घोषित करने की शक्ति इसके साथ आती है,

कर्तव्य की सीमाएँ, कानून बनाना जब कोई मौजूद नहीं है।

हुआ मुक्ति मोर्चा बनाम यू. ओ. आई. (1984) 3 एस. सी. सी. 161, पैरा

आखा बनाम राजस्थान राज्य (1997) 6 एस. सी. सी. 241, पैरा 16; लक्ष्मीकांत पांडे (1983) 2 एस. सी. सी. 244; कॉमन कॉज बनाम। यूओआई (1996) 1 एससीसी 753; एम. सी मेहता बनाम टी. एन. (1996) 6 एस. सी. सी. 756

ई. एम. ई कोर्ट बार एसोसिएशन। वी. यूओआई (1998) 4 एससीसी 409, पैरा 48

अराम वी. सुधीर बाथम (2012) 1 एस. सी. सी. 333, पैरा 18

: सुविधा के लिए, उद्धरणों में मामले/उद्धरण दिए गए हैं

[.] भारत संघ v. महाराष्ट्र राज्य [अरुण मिश्रा, जे.]

3. भारत संघ द्वारा यह प्रश्न उठाया गया है कि जब न्यायालय विधायिका द्वारा पारित कानून के विधायी और विशिष्ट प्रावधानों को स्वीकार नहीं करता है और केवल विधायिका के पास उन प्रावधानों को संशोधित करने की शक्ति है यदि न्यायालय को लगता है कि प्रावधान उसके लिए स्वीकार्य नहीं हैं, तो उन्हें मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करने वाले होने या कमी के मामले में विधायिका को इसे सुधारने के लिए इंगित करने के लिए निरस्त किया जाना चाहिए। 4. भारत संघ ने प्रस्तुत किया है कि 20.3.2018 दिनांकित निर्णय और आदेश में व्यापक प्रभाव पड़ता है और इसकी समीक्षा की जानी चाहिए

यह न्यायालय। यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि यह न्यायालय उन पहलुओं पर ध्यान देने में विफल रहा है जिनका वर्तमान मामले पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ेगा। 5. यह प्रस्तुत किया जाता है कि 1989 का अधिनियम अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की असमानता को दूर करने के लिए अधिनियमित किया गया था जो असुरक्षित रहते हैं और अपने नागरिक अधिकारों से वंचित रहते हैं। का वक्तव्य

1989 के अधिनियम के उद्देश्य और कारण, जिनके लिए इसे अधिनियमित किया गया था, निम्नानुसार हैं:

" सामाजिक-आर्थिक सुधार के लिए विभिन्न उपायों के बावजूद

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की स्थिति कमजोर बनी हुई है। उन्हें कई नागरिक अधिकारों से वंचित किया जाता है। उन्हें विभिन्न अपराधों, अपमान, अपमान और उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। उन्हें कई क्रूर घटनाओं में उनके जीवन और संपत्ति से वंचित किया गया है। विभिन्न ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों से उनके खिलाफ गंभीर अपराध किए जाते हैं।

2. ..... जब वे अपने अधिकारों का दावा करते हैं और अपने खिलाफ अस्पृश्यता की प्रथाओं का विरोध करते हैं या वैधानिक न्यूनतम मजदूरी की मांग करते हैं या किसी भी बंधुआ और जबरन श्रम करने से इनकार करते हैं, तो निहित स्वार्थ उन्हें डराने की कोशिश करते हैं। जब अनुसूचित

जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ अपना संरक्षण करने का प्रयास करती हैं।

अपनी महिलाओं का आत्म-सम्मान या सम्मान, वे प्रबल और पराक्रमी लोगों के लिए चिड़चिड़े हो जाते हैं। अनुसूचित जातियों द्वारा सरकार द्वारा आवंटित भूमि पर भी व्यवसाय और खेती करना और

अनुसूचित जनजातियों को गुस्सा आता है और अक्सर ये लोग

निहित स्वार्थों के हमलों का शिकार हो जाते हैं। पिछले कुछ समय से अनुसूचित जाति के लोगों को परेशान करने जैसे कुछ अत्याचारों की परेशान करने वाली प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है मानव मल और असहाय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों पर हमलों और सामूहिक हत्याओं और अनुसूचित जातियों और [2019] 12 एस. सी. आर. से संबंधित महिलाओं के साथ बलात्कार जैसे अखाद्य पदार्थ।

अनुसूचित जनजातियाँ। इन परिस्थितियों में, मौजूदा कानून

जैसे नागरिक अधिकार संरक्षण अधिनियम, 1955 और भारतीय दंड संहिता के सामान्य प्रावधान पाए गए हैं -

इन अपराधों की जाँच करने के लिए अपर्याप्त। इसलिए गैर-अनुसूचित जातियों और गैर-अनुसूचित जनजातियों द्वारा उनके खिलाफ किए गए अपराधों की जांच और उन्हें रोकने के लिए एक विशेष कानून बनाना आवश्यक हो गया है।

1989 के अधिनियम की प्रस्तावना में कहा गया हैः

" अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ अत्याचार के अपराधों को रोकने के लिए एक अधिनियम, ऐसे अपराधों के मुकदमे के लिए विशेष अदालतों का प्रावधान करना और

ऐसे अपराधों के पीड़ितों को राहत और पुनर्वास और

उससे जुड़े या उससे प्रासंगिक मामलों के लिए।

1989 के अधिनियम की धारा 18 को अंतर्निहित प्रतिरोध का ध्यान रखने और सदस्यों के बीच सुरक्षा की भावना पैदा करने के लिए अधिनियमित किया गया है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति। यह प्रस्तुत किया जाता है कि किसी भी

इसका कमजोर होना अत्याचारों के अपराधों को रोकने के लिए तंत्र के उद्देश्य को हिला देगा। जारी किए गए निर्देशों से योग्य मामलों में भी न्याय की विफलता होगी। कानून के कथित दुरुपयोग पर आपत्ति जताने के लिए ऐसा कोई निर्देश जारी नहीं किया जा सकता है। यदि 1989 के अधिनियम के तहत कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है,

अग्रिम जमानत दी जा सकती है। विचाराधीन मामले में भी यही अनुमति दी गई थी।

6. यह प्रस्तुत किया जाता है कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के खिलाफ निरंतर अत्याचार के कारण,

उनके खिलाफ अपराधों के कमीशन ने वृद्धि का संकेत दिया, यहां तक कि मौजूदा प्रावधानों को प्राप्त करने के लिए पर्याप्त नहीं माना गया था

इसका उद्देश्य अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को समान न्याय प्रदान करना है। इसलिए, 1989 के अधिनियम को अप्रैल 2015 में संशोधित किया गया था, जिसे 26.01.2016 से लागू किया गया था। 7. यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि संशोधन मोटे तौर पर कई नए अपराधों/अत्याचारों को जोड़ने से संबंधित हैं जैसे कि मुंडन

सिर/मूंछ, या इसी तरह के कार्य जो अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों की गरिमा के लिए अपमानजनक हैं,

जूता पहनना, सिंचाई सुविधाओं या वन अधिकारों तक पहुंच से इनकार करना, मानव या पशुओं के शवों का निपटान करना या ले जाना, या कब्र खोदना, हाथ से मैला साफ करने की अनुमति देना या उपयोग करना, अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजाति की महिला को देवदासी के रूप में समर्पित करना, जाति के नाम पर दुर्व्यवहार करना, जादू-टोना करना भारत का संघ V।

अत्याचार, सामाजिक या आर्थिक बहिष्कार, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उम्मीदवारों को चुनाव लड़ने के लिए नामांकन दाखिल करने से रोकना, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की महिला का उसके कपड़े उतारकर अपमान करना, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के सदस्य को घर, गाँव या निवास छोड़ने के लिए मजबूर करना, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के लिए पवित्र वस्तुओं को अपवित्र करना, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ यौन प्रकृति के कृत्यों या इशारों को छूना या उनका उपयोग करना।

चोट पहुँचाना, गंभीर चोट पहुँचाना, धमकाना, अपहरण आदि जैसे अपराध। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ दंडनीय अपराधों के रूप में किए गए दस साल से कम कारावास

1989 का अधिनियम, पहले के कुछ अपराधों के पुनर्व्याख्यान और विस्तार के अलावा।

8. यह प्रस्तुत किया जाता है कि विशेष न्यायालयों की स्थापना और विशेष न्यायालयों के विनिर्देशन के लिए भी प्रावधान किए गए हैं।

विशेष लोक अभियोजक विशेष रूप से 1989 के अधिनियम के तहत अपराधों की सुनवाई करेंगे ताकि मामलों का शीघ्र निपटान किया जा सके, विशेष अदालतें और विशेष विशेष अदालतें अपराधों का प्रत्यक्ष संज्ञान लें और आरोप पत्र दायर करने की तारीख से दो महीने के भीतर मुकदमा पूरा करें और "पीड़ितों और गवाहों के अधिकारों" पर अध्याय जोड़ें।

अपराध की प्रकृति, सात दिनों के भीतर स्वीकार्य राहत का भुगतान, जांच पूरी होने पर और साठ दिनों के भीतर आरोप पत्र दाखिल करने के आधार पर Rs.85,000/- से रु. <ID2/- के बीच अभियोजन की समय पर शुरुआत और योजना की आवधिक समीक्षा को सक्षम करने के लिए राज्य, जिला और उप-मंडल स्तर की सतर्कता और निगरानी समितियों द्वारा अपनी-अपनी बैठकों में न्याय प्राप्त करने में पीड़ितों और गवाहों के अधिकारों और अधिकारों के लिए।

10. यह प्रस्तुत किया जाता है कि यह न्यायालय इस निम्न स्तर की सराहना करने में विफल रहा है

1989 के अधिनियम के तहत दोषसिद्धि की दर और बरी होने की उच्च दर, संबंधित मामलों के लिए कई कारकों को जिम्मेदार ठहराया जा सकता है जैसे कि प्राथमिकी दर्ज करने में देरी, गवाहों और शिकायतकर्ताओं का प्रतिकूल होना, अदालत में आरोप पत्र दायर करने से पहले अभियोजन पक्ष द्वारा मामलों की उचित जांच का अभाव, अभियोजन पक्ष द्वारा मामले की उचित प्रस्तुति का अभाव और [2019] 12 एस. सी. आर.

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

न्यायालय द्वारा साक्ष्य की सराहना। मुकदमा लंबे समय से लंबित है, जिससे गवाह अपनी रुचि खो देता है और पुष्टि करने वाले साक्ष्य की कमी हो जाती है। जाँच में प्रक्रियात्मक देरी होती है।

और आरोप पत्र दाखिल करना।

11. यह प्रस्तुत किया जाता है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) नियम, 1995 के नियम 7 (2) में जांच अधिकारी को 30 दिनों के भीतर जांच पूरी करने का प्रावधान है। तत्काल एफ. आई. आर. दर्ज किए बिना और गिरफ्तारी किए बिना और अभियुक्त को अग्रिम जमानत प्रदान किए बिना, नियम 7 निराश होना तय है।

12. यह आगे प्रस्तुत किया जाता है कि जारी किए गए निर्देश विधायी हैं।

यह जाति-आधारित उप-न्याय और भेदभाव को दूर करने के लिए अधिनियम के उद्देश्य को समाप्त कर देगा। भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत इस तरह के निर्देश जारी करने की अनुमति नहीं है।

13. यह भी प्रस्तुत किया जाता है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के खिलाफ अत्याचार के अपराध किए गए हैं।

राष्ट्रीय अपराध अभिलेखों के आंकड़ों के अनुसार यह जारी है।

ब्यूरो (एन. सी. आर. बी.), गृह मंत्रालय, वर्ष 2016 के दौरान भारतीय दंड संहिता के संयोजन में 1989 के अधिनियम के तहत देश में 47,338 मामले दर्ज किए गए। इसके अलावा, उक्त मामलों में से केवल 24.5% दोषसिद्धि में समाप्त हुए और 89.3% वर्ष 2016 के अंत में अदालतों में लंबित थे। इन परिस्थितियों में, प्रावधानों को कमजोर करना और प्रारंभिक जांच, गिरफ्तारी की मंजूरी का निर्देश देकर आरोपी के लिए गिरफ्तारी से बचना आसान बनाना उचित नहीं है।

14. इसके विपरीत, यह प्रस्तुत किया जाता है कि अत्याचार अधिनियम के विधायी प्रावधानों के दुरुपयोग के कारण निर्देश उचित हैं, और कोई मामला नहीं है पुनर्विलोकन अधिकारिता में हस्तक्षेप किया जाता है।

& ओआरएस। (2017) 2 एस. सी. सी. 432, इस न्यायालय ने न्यायमूर्ति के. पुन्नैया आयोग की रिपोर्ट और राष्ट्रीय अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति आयोग की छठी रिपोर्ट पर विचार किया है। एनएचआरसी रिपोर्ट में मामलों के न दर्ज होने और कई अन्य बातों पर भी प्रकाश डाला गया

दलितों को 1989 के अधिनियम के तहत मामले दर्ज करने से हतोत्साहित करने के लिए पुलिस ने साजिशों का सहारा लिया। उक्त मामले में इस न्यायालय ने के प्रावधानों को सख्ती से लागू करने का निर्देश दिया था 1989 का अधिनियम। ऊपर वर्णित निर्णय का प्रासंगिक हिस्सा नीचे दिया गया हैः

भारत संघ v. महाराष्ट्र राज्य [अरुण मिश्रा, जे.]

" 18. हमने रिकॉर्ड पर सामग्री की सावधानीपूर्वक जांच की है, और हम

राय है कि की ओर से एक विफलता हुई है

और नियम। वह प्रशंसनीय उद्देश्य जिसके साथ अधिनियम बनाया गया था अधिकारियों के उदासीन रवैये से पराजित हो जाता है। यह है।

यह सच है कि राज्य सरकारें इसे पूरा करने के लिए जिम्मेदार हैं

के लिए वकील द्वारा प्रतिवाद के रूप में अधिनियम के प्रावधान

केंद्र सरकार और राज्य सरकार द्वारा उठाए गए उपाय अधिनियम के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए सरकारें

हर साल संसद के समक्ष रखा जाता है। संवैधानिक लक्ष्य

इस देश के सभी नागरिकों के लिए समानता तभी प्राप्त की जा सकती है

जब अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के अधिकार

संरक्षित हैं। अभिलेख पर प्रचुर मात्रा में सामग्री साबित करती है कि

संबंधित अधिकारी प्रावधानों को लागू नहीं करने के लिए दोषी हैं

अधिनियम। अनुसूचित जातियों के सदस्यों की पीड़ा

और अनुसूचित जनजातियाँ बेरोकटोक जारी रहती हैं। हम संतुष्ट हैं।

कि केंद्र सरकार और राज्य सरकारों को

तो। राष्ट्रीय आयोगों को भी उनके कार्यों का निर्वहन करने का निर्देश दिया जाता है अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की रक्षा करना। .....

" 9

16. रिलायंस को ललिता कुमारी बनाम पर रखा गया है। सरकार

पी., (2014) 2 एस. सी. सी. 1, जिसमें इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने निम्नानुसार निर्णय दिया हैः

" 35. हालांकि, दूसरी ओर, कई मामले हैं

जो प्रदर्शित करता है कि ऐसे उदाहरण हैं जहाँ की शक्ति

पुलिस एक एफ. आई. आर. दर्ज करेगी और उसकी जाँच शुरू करेगी

जहाँ एक संज्ञेय अपराध नहीं बनाया जाता है वहाँ दुरुपयोग किया जाता है

शिकायत की सामग्री। इस संदर्भ में एक महत्वपूर्ण मामला यह है कि

प्रीति गुप्ता बनाम का मामला। झारखंड राज्य (2010) 7 एससीसी 667 जिसमें इस न्यायालय ने इसके दुरुपयोग पर अपनी चिंता व्यक्त की है

दंड संहिता, 1860 की धारा 498-ए (संक्षेप में "आई. पी. सी".)

जिसके संबंध में बड़ी संख्या में तुच्छ रिपोर्ट दर्ज की गई थी।

इस न्यायालय ने अपनी इच्छा व्यक्त की कि विधायिका को इसमें शामिल होना चाहिए। जानकार जनमत और व्यावहारिक वास्तविकताओं पर विचार करें।

कानून में आवश्यक परिवर्तन करना।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

36. उपरोक्त निर्णय के परिणामस्वरूप भारत के विधि आयोग की 243 वीं रिपोर्ट 30-8-2012 पर प्रस्तुत की गई। कानून.

आयोग ने अपनी रिपोर्ट में निष्कर्ष निकाला कि हालांकि धारा 498-ए के तहत अपराध को शमनीय बनाया जा सकता है, हालांकि, दुरुपयोग की सीमा अनुभवजन्य डेटा द्वारा स्थापित नहीं की गई थी, और इस प्रकार, इसकी प्रभावकारिता के प्रावधान को अस्वीकार करने का आधार नहीं हो सकता है। विधि आयोग ने यह भी कहा कि इस सवाल पर कानून कि क्या प्राथमिकी दर्ज करने को उचित समय के लिए स्थगित किया जा सकता है, अनिश्चितता की स्थिति में है और इसे केवल इसी पर स्पष्ट किया जा सकता है

न्यायालय वर्तमान विवाद पर विराम लगा रहा है।

***

99. सीबीआई बनाम। तपन कुमार सिंह (2003) 6 एस. सी. सी. 175, यह आयोजित किया गया था

निम्नानुसारः (एससीसी पीपी। 183-84 , पैरा 20)

" 20. ..... यदि उसके पास प्राप्त जानकारी के आधार पर संदेह करने के कारण हैं कि एक संज्ञेय अपराध किया गया हो सकता है, तो वह जानकारी दर्ज करने और जांच करने के लिए बाध्य है। इस स्तर पर, उसके लिए यह भी आवश्यक नहीं है कि वह जानकारी की सच्चाई के बारे में खुद को संतुष्ट करे। पूर्ण जाँच के बाद ही वह जानकारी की सच्चाई या अन्यथा पर रिपोर्ट करने में सक्षम हो सकता है। ..... सही परीक्षण यह है कि क्या प्रस्तुत की गई जानकारी किसी अपराध के होने पर संदेह करने का कारण प्रदान करती है, जिसकी जांच करने के लिए संबंधित पुलिस अधिकारी को संहिता की धारा 156 के तहत अधिकार दिया गया है। यदि ऐसा होता है, तो उसके पास जानकारी दर्ज करने और मामले की जांच करने के लिए या तो स्वयं या किसी अन्य सक्षम अधिकारी को जांच करने के लिए नियुक्त करने के अलावा कोई विकल्प नहीं है।

ललिता कुमारी (उपरोक्त) के निर्णय से यह स्पष्ट है कि संज्ञेय अपराध करने से संबंधित मामले में तुरंत प्राथमिकी दर्ज की जानी चाहिए। एफ. आई. आर. दर्ज करने से पहले प्रारंभिक जाँच शुरू करने के लिए पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को कोई विवेकाधिकार नहीं है। प्रारंभिक जाँच केवल उस मामले में की जा सकती है जहाँ यह पता लगाना हो कि कोई संज्ञेय अपराध किया गया है या नहीं। यदि जानकारी एक संज्ञेय आयोग का खुलासा करती है

अपराध के लिए, Cr.PC की धारा 154 के तहत प्राथमिकी दर्ज करना अनिवार्य है, और ऐसी स्थिति में कोई प्रारंभिक जांच की अनुमति नहीं है। इस न्यायालय ने ललिता कुमार (ऊपर) मामले में निम्नलिखित टिप्पणी कीः

" 54. इसलिए, वह संदर्भ जिसमें संहिता की धारा 154 (1) में "होगा" शब्द दिखाई देता है, वह उद्देश्य जिसके लिए इसका उपयोग किया गया है और इसके उल्लंघन से होने वाले परिणाम

एफ. आई. आर. दर्ज करने का निर्देश, ये सभी कारक स्पष्ट रूप से दर्शाते हैं कि धारा 154 (1) में उपयोग किए गए शब्द "होगा" को इसके अनुसार दिए जाने की आवश्यकता है।

"अनिवार्य" चरित्र होने का सामान्य अर्थ। द.

संहिता की धारा 154 (1) के प्रावधान, जिन्हें सांविधिक योजना के आलोक में पढ़ा जाता है, पुलिस थाने के प्रभारी अधिकारी को किसी कार्य को शुरू करने के लिए कोई विवेकाधिकार प्रदान करने की बात स्वीकार नहीं करते हैं।

कानून की स्थिति कि यदि प्रावधान असंदिग्ध है और विधायी इरादा स्पष्ट है, अदालत को इसमें निर्माण के किसी अन्य नियम को शामिल करने की आवश्यकता नहीं है।

गिरफ्तारी के प्रश्न के संबंध में, ललिता कुमारी (ऊपर) में इस टी ने एक आरोपी एन की गिरफ्तारी के संबंध में सुरक्षा पर विचार किया है। इस न्यायालय ने इस सिद्धांत की पुष्टि की कि गिरफ्तारी केवल अपराध करने के आरोप पर नहीं की जा सकती है। द.

सुरक्षा उपायों के कारण अत्याचार अधिनियम के तहत शिकायतों पर लागू एक विशेष व्यवस्था बनाने के औचित्य के रूप में उत्पन्न होता है आम तौर पर केबल।

17. हरियाणा और अन्य राज्यों में। वी. भजन लाल और अन्य। , 1992 (1) एस. सी. सी. 335, जिस पर ललिता कुमारी (ऊपर) में भरोसा किया गया है, न्यायालय ने निम्नानुसार टिप्पणी की हैः

" 31. अनुपालन में संज्ञेय अपराध का खुलासा करने वाली जानकारी के आधार पर अपराध या मामला दर्ज करने के चरण में

संहिता की धारा 154 (1) के अधिदेश के साथ, संबंधित पुलिस अधिकारी इस बारे में जांच शुरू नहीं कर सकता है कि क्या सूचना देने वाले द्वारा दी गई जानकारी विश्वसनीय और वास्तविक है या अन्यथा और इस आधार पर मामला दर्ज करने से इनकार कर सकता है कि जानकारी विश्वसनीय या विश्वसनीय नहीं है। दूसरी ओर, एक पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी सांविधिक रूप से एक मामला दर्ज करने और फिर जांच के साथ आगे बढ़ने के लिए बाध्य है यदि उसके पास किसी अपराध के होने का संदेह करने का कारण है जिसकी जांच करने के लिए उसे संहिता की धारा 156 के तहत अधिकार दिया गया है। धारा 157। (जैसा कि हमने एक विस्तृत बनाने का प्रस्ताव दिया है

के क्षेत्र में एक पुलिस अधिकारी की शक्ति के बारे में चर्चा

धारा [2019] 12 एस. सी. आर. के दायरे में संज्ञेय अपराध का अन्वेषण।

156 और संहिता के 157 इस निर्णय के आगामी भाग में, हम

उन धाराओं के साथ वर्तमान संदर्भ में विस्तार से निपटने का प्रस्ताव न करें)। मामले में, एक पुलिस स्टेशन का प्रभारी अधिकारी अपने अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करने और दर्ज किए गए संज्ञेय अपराध की जानकारी पर मामला दर्ज करने से इनकार करता है और इस तरह

उस पर लगाए गए वैधानिक कर्तव्य का उल्लंघन करता है, जिससे व्यथित व्यक्ति

इस तरह के इनकार से संबंधित पुलिस अधीक्षक को लिखित रूप में और डाक द्वारा जानकारी का सार भेजा जा सकता है, जो इस बात से संतुष्ट है कि उसे भेजी गई जानकारी एक संज्ञेय अपराध का खुलासा करती है, तो उसे या तो स्वयं मामले की जांच करनी चाहिए या संहिता की धारा 154 की उप-धारा (3) द्वारा प्रदान किए गए तरीके से अपने अधीनस्थ किसी पुलिस अधिकारी द्वारा जांच करने का निर्देश देना चाहिए।

32. यह ध्यान दिया जाए कि संहिता की धारा 154 (1) में, विधायिका ने अपने सामूहिक ज्ञान में सावधानीपूर्वक और सावधानीपूर्वक इसका उपयोग किया है -

संज्ञेय अपराध करने और उस पर इस आधार पर मामला दर्ज करने से संबंधित कि वह इससे संतुष्ट नहीं है जानकारी की तर्कसंगतता या विश्वसनीयता। दूसरे शब्दों में, उक्त जानकारी की 'तर्कसंगतता' या 'विश्वसनीयता' किसी मामले के पंजीकरण के लिए पूर्ववर्ती शर्त नहीं है। पूर्ववर्ती संहिताओं के साथ वर्तमान धारा 154 की तुलना से संकेत मिलेगा कि

कि विधायिका ने जानबूझकर उक्त शब्द को योग्य बनाए बिना केवल "सूचना" शब्द का उपयोग करना उचित समझा था। भारतीय विधान परिषद द्वारा पारित 1861 की दंड प्रक्रिया संहिता (1861 का अधिनियम 25) की धारा 139 में कहा गया है कि 'प्रत्येक शिकायत या जानकारी' को किसी के प्रभारी अधिकारी को प्राथमिकता दी जाती है।

पुलिस स्टेशन को लिखित रूप में कम किया जाना चाहिए, जिसके प्रावधान को बाद में 1872 की संहिता (1872 का अधिनियम 10) की धारा 112 द्वारा संशोधित किया गया था, जिसमें कहा गया था कि 'प्रत्येक शिकायत' को प्राथमिकता दी जाती है। पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी को लिखित रूप में कम किया जाएगा। 'शिकायत' शब्द जो 1861 और 1872 की पिछली दो संहिताओं में आया था, उसे हटा दिया गया था और उस स्थान पर 'सूचना' शब्द भारत संघ v.

1882 और 1898 की संहिताओं में उपयोग किया गया था जो शब्द अब 1973 की वर्तमान संहिता (1974 का अधिनियम 2) की धारा 154,155,157 और 190 (सी) में उपयोग किया जाता है। सभी कोडों का समग्र अध्ययन इसे बनाता है।

स्पष्ट करें कि प्रथम सूचना रिपोर्ट दर्ज करने के लिए जो शर्त अनिवार्य है वह यह है कि एक जानकारी होनी चाहिए और वह

जानकारी को संज्ञेय अपराध का खुलासा करना चाहिए।

33. इसलिए, यह स्पष्ट रूप से स्पष्ट है कि यदि किसी संज्ञेय अपराध का खुलासा करने वाली कोई जानकारी संहिता की धारा 154 (1) की आवश्यकताओं को पूरा करने वाले पुलिस स्टेशन के प्रभारी अधिकारी के समक्ष रखी जाती है, तो उक्त पुलिस अधिकारी के पास अपराध दर्ज करने के अलावा कोई अन्य विकल्प नहीं है।

निर्धारित प्रपत्र में उसका सार, अर्थात ऐसी जानकारी के आधार पर मामला दर्ज करना।

न्यायालय ने कहा कि एफ. आई. आर. दर्ज होने के बाद किसी अपराध की जांच करना कानून द्वारा स्थापित एक प्रक्रिया है और यह संविधान के अनुच्छेद 21 के अनुरूप है। इस अदालत ने भी

ललिता कुमारी (ऊपर) में कानून के प्रावधानों के संभावित दुरुपयोग पर विचार किया गया।

18. भारत संघ की ओर से, एम. पी. बनाम राज्य में निर्णय। राम कृष्ण बलोथिया (1995) 3 एस. सी. सी. 221 पर भरोसा किया गया है, जिसमें

इस न्यायालय ने 1989 के अधिनियम की धारा 18 की वैधता को बरकरार रखा है और अस्पृश्यता की प्रथा और सामाजिक रवैये से संबंधित पृष्ठभूमि में कहा है जो अनुसूचित जातियों/अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ ऐसे अपराधों को करने का कारण बनता है।

आशंका है कि यदि अग्रिम जमानत का लाभ उपलब्ध कराया जाता है

जिन व्यक्तियों पर इस तरह के अपराध करने का आरोप है, उनके पीड़ितों को आतंकित करने और उचित जांच को रोकने के लिए अग्रिम जमानत पर रहते हुए उस स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने की पूरी संभावना है। राम कृष्ण बलोथिया (ऊपर) के मामले में इस न्यायालय ने टिप्पणी की हैः

" 6. यह निस्संदेह सच है कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 438, जो दंड संहिता के तहत अपराधों के संबंध में एक आरोपी के लिए उपलब्ध है, उक्त अधिनियम के तहत अपराधों के संबंध में उपलब्ध नहीं है। लेकिन क्या इसे अनुच्छेद 14 का उल्लंघन माना जा सकता है? उक्त अधिनियम के तहत गिने गए अपराध एक अलग धारा में आते हैं।

और विशेष वर्ग। संविधान का अनुच्छेद 17 स्पष्ट रूप से 'अस्पृश्यता' के उन्मूलन से संबंधित है और किसी भी रूप में इसके अभ्यास को मना करता है। इसमें यह भी प्रावधान है कि उत्पन्न होने वाली किसी भी अक्षमता को लागू किया जाए

'अस्पृश्यता' से बाहर आना [2019] 12 एस. सी. आर. के तहत दंडनीय अपराध होगा।

कानून। इसलिए, धारा 3 (1) के तहत गिने जाने वाले अपराध 'अस्पृश्यता' के अभ्यास से उत्पन्न होते हैं। इस संदर्भ में उक्त अधिनियम में कुछ विशेष प्रावधान किए गए हैं।

जिसमें धारा 18 के तहत विवादित प्रावधान शामिल है जो इससे पहले है

इस संबंध में हम अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उद्देश्यों और कारणों के विवरण का उल्लेख कर सकते हैं। (अत्याचार निवारण) विधेयक, 1989, जब इसे संसद में पेश किया गया था। यह आसपास की परिस्थितियों को निर्धारित करता है

उक्त अधिनियम का अधिनियमन और उस बुराई की ओर इशारा करता है जिसे क़ानून सुधारना चाहता है। उद्देश्यों और कारणों के कथन में कहा गया हैः

" अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सामाजिक-आर्थिक स्थितियों में सुधार के लिए विभिन्न उपायों के बावजूद, वे असुरक्षित बने हुए हैं। उन्हें कई नागरिक अधिकारों से वंचित किया जाता है। उन्हें विभिन्न अपराधों, अपमान, अपमान और उत्पीड़न का सामना करना पड़ता है। उन्हें कई क्रूर घटनाओं में उनके जीवन और संपत्ति से वंचित किया गया है। विभिन्न ऐतिहासिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों से उनके खिलाफ गंभीर अपराध किए जाते हैं।

मजदूरी या किसी भी बंधुआ और जबरन श्रम करने से इनकार, निहित हित उन्हें डराने और डराने की कोशिश करते हैं। जब अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति संरक्षित करने का प्रयास करते हैं

अपनी महिलाओं का आत्म-सम्मान या सम्मान, वे प्रबल और पराक्रमी लोगों के लिए चिड़चिड़े हो जाते हैं। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों द्वारा सरकार द्वारा आवंटित भूमि पर भी व्यवसाय और खेती करने पर नाराजगी है, और अक्सर ये लोग

निहित स्वार्थों के हमलों का शिकार हो जाते हैं। पिछले कुछ समय से अनुसूचित जाति के लोगों को खाने के लिए मजबूर करने जैसे कुछ अत्याचारों की परेशान करने वाली प्रवृत्ति में वृद्धि हुई है

मानव मल जैसे अखाद्य पदार्थ और भारत संघ पर हमले और द्रव्यमान v.

महाराष्ट्र राज्य [अरुण मिश्रा, जे.]

असहाय अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की हत्या और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की महिलाओं के साथ बलात्कार। इसलिए गैर-अनुसूचित जातियों और गैर-अनुसूचित जनजातियों द्वारा उनके खिलाफ किए गए अपराधों की जांच और उन्हें रोकने के लिए एक विशेष कानून बनाना आवश्यक हो गया है।

उपरोक्त कथन उन सामाजिक स्थितियों का चित्रमय वर्णन करता है जिन्होंने उक्त विधान को प्रेरित किया। उपरोक्त उद्देश्यों और कारणों के कथन में यह बताया गया है कि जब अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्य अपने अधिकारों का दावा करते हैं और

वैधानिक संरक्षण की मांग करते हुए, निहित स्वार्थ उन्हें डराने और डराने की कोशिश करते हैं। इन परिस्थितियों में, यदि अग्रिम जमानत है

इस तरह के अपराध करने वाले व्यक्तियों को उपलब्ध नहीं कराया गया है, इस तरह के इनकार को अनुच्छेद 14 का अनुचित या उल्लंघनकारी नहीं माना जा सकता है, क्योंकि ये अपराध अपने आप में एक अलग वर्ग बनाते हैं और उनकी तुलना अन्य अपराधों से नहीं की जा सकती है।

9. बेशक, वर्तमान मामले के तहत गिने गए अपराध ये आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधियाँ (रोकथाम) अधिनियम, 1987 के तहत उन लोगों से बहुत अलग हैं। हालांकि, "अस्पृश्यता" की प्रथा से संबंधित ऐतिहासिक पृष्ठभूमि और अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ इस तरह के अपराधों का कारण बनने वाले सामाजिक दृष्टिकोण को देखते हुए, इस आशंका का औचित्य है कि अगर अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के खिलाफ इस तरह के अपराधों का लाभ होता है तो

जिन व्यक्तियों पर इस तरह के अपराध करने का आरोप है, उन्हें अग्रिम जमानत उपलब्ध कराई जाती है, उनके पीड़ितों को आतंकित करने और उचित जांच को रोकने के लिए अग्रिम जमानत पर रहते हुए अपनी स्वतंत्रता का दुरुपयोग करने की पूरी संभावना है। इसी संदर्भ में उक्त अधिनियम में धारा 18 को शामिल किया गया है। इसे किसी भी तरह से अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं माना जा सकता है।

10. हमारे समक्ष यह प्रस्तुत किया गया था कि जबकि धारा 438 दंड संहिता के तहत गंभीर अपराधों के लिए उपलब्ध है, यह उक्त अधिनियम के तहत "छोटे अपराधों" के लिए भी उपलब्ध नहीं है। इस शिकायत को भी उचित नहीं ठहराया जा सकता है। जिन अपराधों की गणना की गई है

धारा 3 ऐसे अपराध हैं जो समाज की दृष्टि में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों को कम से कम बदनाम करते हैं।

और उन्हें गरिमा और आत्मसम्मान का जीवन जीने से रोकें। इस तरह के अपराध अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को अपमानित करने और अधीन करने के लिए किए जाते हैं ताकि उन्हें दासता की स्थिति में रखा जा सके। ये अपराध एक अलग [2019] 12 एस. सी. आर. का गठन करते हैं।

वर्ग और दंड के तहत अपराधों के साथ तुलना नहीं की जा सकती है कोड "।

19. कर्तार सिंह बनाम। पंजाब राज्य (1994) 3 एस. सी. सी. 569, यहः उन्होंने कहा है कि धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत के अधिकार से इनकार करना संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं होगा। अतः, धारा 18 के प्रावधान को अनुच्छेद 21 का उल्लंघन करने वाला नहीं कहा जा सकता है। संविधान का अनुच्छेद 17 अस्पृश्यता को समाप्त करता है।

20. सुब्रमण्यम स्वामी और ओआरएस में। वी. राजू (2014) 8 एससीसी 390,

बी ने कहा कि जहां वैधानिक प्रावधान स्पष्ट और असंदिग्ध हैं, उन्हें पढ़ा नहीं जाना चाहिए और यह देखा गया है कि आंकड़ों को विधायिका द्वारा पढ़ा जाना चाहिए। न्यायालय को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि वह व्यक्त न करे

ऐसे आंकड़ों की पर्याप्तता या पर्याप्तता पर पिनियन और चाहिए

वैधता के लिए उनकी जांच कानून की आवश्यकता नहीं है। यह न्यायालय वेदः

" 67. अलग होने से पहले, हम यह देखना चाहेंगे कि किशोरों द्वारा किए गए गंभीर अपराधों की सीमा और अपराधों की दर में वृद्धि को दिखाने के लिए हमारे सामने विस्तृत आंकड़े रखे गए हैं।

इस तरह के अपराध, देर से। हम उक्त क्षेत्र में प्रवेश करने के लिए प्रलोभित होने से इनकार करते हैं, जो मुख्य रूप से विधायिका को विचार करने के लिए है। अदालतें

इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पर्याप्तता पर राय व्यक्त न करें या

ऐसे आंकड़ों की पर्याप्तता और इसकी जांच वैधता तक सीमित होनी चाहिए न कि कानून बनाने या जारी रखने की आवश्यकता। हमें मूर्ति मैच वर्क्स (1974) 4 एस. सी. सी. 428 में न्यायमूर्ति कृष्ण अय्यर की टिप्पणियों को याद करना उचित होगा, क्योंकि वर्तमान मुद्दों पर उसी द्वारा पर्याप्त ध्यान दिया गया प्रतीत होता हैः (एस. सी. सी पी.

437 , पैरा 13-15)

" 13. ठीक दहलीज पर, हमें इस अधिकार क्षेत्र में न्यायिक शक्ति की सीमाओं के बारे में खुद को सचेत करना चाहिए। संयुक्त राज्य अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के श्री न्यायमूर्ति स्टोन ने संयुक्त राज्य अमेरिका बनाम में इन सीमाओं को चित्रित किया है। बटलरः 80 एल एड 477: 297 अमेरिका 1

(1936) इस प्रकारः (एल. एड पी. 495)

" किसी कानून को असंवैधानिक घोषित करने की अदालतों की शक्ति निर्णय के दो मार्गदर्शक सिद्धांतों के अधीन है जो न्यायिक चेतना से कभी भी अनुपस्थित नहीं होना चाहिए। एक यह है कि न्यायालयों का संबंध केवल कानूनों को लागू करने की शक्ति से है, न कि उनके विवेक से। दूसरा यह है कि भारत संघ की कार्यकारी और विधायी शाखाओं द्वारा शक्ति का असंवैधानिक प्रयोग।

सरकार न्यायिक संयम के अधीन है, हमारी शक्ति के प्रयोग पर एकमात्र रोक हमारी अपनी आत्म-संयम की भावना है। कानून की पुस्तकों से मूर्खतापूर्ण कानूनों को हटाने के लिए अपील अदालतों के लिए नहीं बल्कि मतपत्र और प्रक्रियाओं के लिए है

लोकतांत्रिक सरकार "।

14. संक्षेप में, असंवैधानिकता और किसी कानून की अज्ञानता न्यायिक समीक्षा का संकीर्ण क्षेत्र है। वर्तमान मामले में, असंवैधानिकता को एक साथ रहने से उत्पन्न होने का आरोप लगाया गया है

माचिस निर्माताओं की दो अलग-अलग श्रेणियां एक में

समान उपचार के लिए डिब्बे।

15. वर्गीकरण पर आधारित कुछ सिद्धांत हो सकते हैं -

यहाँ उल्लेख किया गया है। यह सच है कि कोई राज्य व्यक्तियों का वर्गीकरण कर सकता है और राजस्व या अन्य उद्देश्यों को प्राप्त करने के उद्देश्य से कानून बनाने और कानून पारित करने के उद्देश्य। प्रत्येक भेदभाव भेदभाव नहीं है। लेकिन वर्गीकरण केवल तभी कायम रह सकता है जब यह प्रासंगिक और वास्तविक अंतरों पर आधारित हो जो अप्रासंगिक और कृत्रिम से अलग हैं। द्वारा संवैधानिक मानक

जिसे वर्गीकरण के लिए एक वैध आधार बनाने वाले अंतर की पर्याप्तता को मापा जा सकता है, अदालतों द्वारा बार-बार कहा गया है। यदि यह किसी ऐसे अंतर पर आधारित है जो उस उद्देश्य के साथ एक उचित और न्यायपूर्ण संबंध रखता है जिसके लिए इसे प्रस्तावित किया गया है, तो यह संवैधानिक है। इसे अलग तरह से रखने के लिए, साधनों का सिरों के साथ संबंध होना चाहिए। फिर भी, राज्य को उचित आधार पर वर्गीकरण के लिए एक बड़े अक्षांश की अनुमति है और जो उचित है वह व्यावहारिक विवरणों और विभिन्न कारकों का सवाल है जो

न्यायालय अनिच्छुक होगा और शायद जाँच करने के लिए तैयार नहीं होगा। में।

समूहीकरण में भी यह अपूर्ण विश्व पूर्णता एक ऐसी महत्वाकांक्षा है जिसे शायद ही कभी पूरा किया गया हो। इस संदर्भ में, हमें वर्गीकरण की वैधता के निर्धारण में सरकार के विधायी और न्यायिक विभागों के बीच संबंधों को याद रखना होगा। बेशक, अंतिम विश्लेषण में अदालतों के पास शक्ति है अन्य शाखाओं के कृत्यों की संवैधानिकता पर घोषणा करें

क्या कोई वर्गीकरण पर्याप्त मतभेदों पर आधारित है या मनमाना, काल्पनिक और परिणामस्वरूप अवैध है। साथ ही, वर्गीकरण का प्रश्न मुख्य रूप से विधायी निर्णय के लिए है, और आम तौर पर न्यायिक प्रश्न नहीं बन जाता है। अत्यंत व्यापक और विविधता पर आधारित होने के कारण वर्गीकृत करने की शक्ति

कार्यकारी व्यावहारिकता को ध्यान में रखते हुए, न्यायपालिका [2019] 12 एस. सी. आर. नहीं कर सकती।

जहाँ विधायिका भी युद्धरत तरीके से चलती है वहाँ जल्दबाजी करें। ये सब

न्यायिक शक्ति पर परिचालन संबंधी प्रतिबंधों का अधिक वजन होना चाहिए

जहां विषय कराधान है।

(जोर दिया गया)

सुब्रमण्यम स्वामी (उपर्युक्त) में यह देखा गया है कि कहाँ

वैधानिक प्रावधान स्पष्ट और स्पष्ट हैं, इन्हें पढ़ा नहीं जा सकता है। दी की संख्या के रूप में इस न्यायालय के निर्देशों का पालन करना संभव नहीं होगा। एस. पी. स्तर के अधिकारी निर्देशों का पालन करने के लिए पर्याप्त नहीं हैं।

21. के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों के प्रयोग के बारे में

भारत के संविधान, विद्वान महान्यायवादी ने प्रस्तुत किया है कि इस तरह की शक्ति का उपयोग वैधानिक प्रावधानों की भावना के खिलाफ और उन्हें रद्द करने के लिए नहीं किया जा सकता था और विधायिका के लिए आरक्षित क्षेत्र क्योंकि कोई रिक्तता नहीं थी। उन्होंने निम्नलिखित निर्णयों का उल्लेख किया हैः

(क) उच्चतम न्यायालय बार एसोसिएशन बनाम। भारत संघ, (1998)

4 एससीसी

" 47. ..... हालाँकि, यह याद रखने की आवश्यकता है कि शक्तियाँ अनुच्छेद 142 द्वारा न्यायालय को प्रदान किया गया उपचारात्मक प्रकृति का होना

इसे ऐसी शक्तियों के रूप में नहीं माना जा सकता है जो न्यायालय को नजरअंदाज करने के लिए अधिकृत करती हैं

एक कारण से निपटने के दौरान एक वादी के मूल अधिकार

उसके सामने लंबित है। इस शक्ति का उपयोग "प्रतिस्थापन" के लिए नहीं किया जा सकता है।

विचाराधीन मामले या कारण पर लागू मूल कानून

अदालत से। अनुच्छेद 142, इसके आयाम की चौड़ाई के साथ भी,

एक नई इमारत के निर्माण के लिए उपयोग नहीं किया जा सकता है जहां पहले कोई मौजूद नहीं था,

किसी विषय से संबंधित स्पष्ट वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करके

और इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से कुछ हासिल करने के लिए जो नहीं हो सकता है सीधे प्राप्त किया। .....

48. ..... वास्तव में, ये संवैधानिक शक्तियाँ, किसी भी तरह से, किसी भी वैधानिक प्रावधान द्वारा नियंत्रित किया जाएगा लेकिन साथ ही

इन शक्तियों का प्रयोग उनके प्रयोग के समय नहीं किया जाना चाहिए

जो स्पष्ट रूप से किया गया है उसके साथ सीधे संघर्ष में आ सकता है

विषय के साथ स्पष्ट रूप से निपटने वाले कानून में उपबंध किया गया है।

(ख) प्रेम चंद गर्ग बनाम। आबकारी आयुक्त। , ए. आई. आर 1963 एस. सी 996,

न्यायालय ने कहा कि उसके पास भारत के संविधान के अनुच्छेद 32 के तहत गारंटीकृत मौलिक अधिकारों को सीमित करने की कोई शक्ति नहीं है।

(ग) ई. एस. पी. राजाराम बनाम। भारत संघ, (2001) 2 एस. सी. सी. 186, न्यायालय ने कहा कि उच्चतम न्यायालय ने संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत

संविधान किसी कानून के मूल प्रावधानों की पूरी तरह से अवहेलना नहीं कर सकता था और किसी मुद्दे से संबंधित आदेश पारित नहीं कर सकता था, जिसका निपटारा केवल किसी अन्य कानून में निर्धारित तंत्र के माध्यम से किया जा सकता है।

((घ) ए. आर. अंतुले बनाम आर. एस. नायक, (1988) 2 एस. सी. सी. 602 में यह देखा गया है कि यद्यपि अनुच्छेद 142 की भाषा व्यापक है और पूर्ण रूप से, न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश किसी भी क़ानून के विशिष्ट प्रावधानों के साथ असंगत, प्रतिकूल या उल्लंघन नहीं होने चाहिए।

(ई) बोन्क्या बनाम में। महाराष्ट्र राज्य, (1995) 6 एस. सी. सी. 447, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया है कि न्यायालय संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत अधिकारिता का प्रयोग करता है।

संविधान पक्षकारों के बीच न्याय करने का इरादा रखता है, लेकिन प्रासंगिक वैधानिक प्रावधानों की अवहेलना में नहीं।

(च) एम. सी. मेहता बनाम कमल नाथ, (2000) 6 एस. सी. सी. 212, इस न्यायालय ने कहा है कि अनुच्छेद 142, इसके आयाम की चौड़ाई के साथ भी, ऐसा नहीं कर सकता है।

एक नई इमारत के निर्माण के लिए उपयोग किया जाए जहां पहले कोई मौजूद नहीं था, किसी विषय से संबंधित स्पष्ट वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करके और इस तरह अप्रत्यक्ष रूप से कुछ ऐसा प्राप्त करें जिसे सीधे प्राप्त नहीं किया जा सकता है। (छ) पंजाब राज्य में बनाम। राजेश स्याल, (2002) 8 एस. सी. सी. 158, न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 142 (1) के तहत शक्ति का प्रयोग करने में भी, यह संदेह से अधिक है कि कानून के विपरीत आदेश पारित किया जा सकता है।

(ज) टेक्सटाइल लेबर एसोसिएशन बनाम। आधिकारिक परिसमापक, (2004)

9 एस. सी. सी. 741 में कहा गया है कि अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति केवल एक अवशिष्ट शक्ति है, जो क़ानूनों द्वारा इस न्यायालय को स्पष्ट रूप से प्रदान की गई शक्तियों का पूरक और पूरक है, जो पक्षकारों के बीच पूर्ण न्याय करने के लिए प्रयोग की जा सकती है, जहां भी ऐसा करना न्यायसंगत और न्यायसंगत है। इसका उद्देश्य न्याय की धारा में किसी भी बाधा को रोकना है।

((i) लक्ष्मीदास मोरारजी बनाम। बेहरोज दराब मदन, (2009) 10 एस. सी. सी. 425, यह कहा गया कि सर्वोच्च न्यायालय किसी भी मामले को पारित नहीं करेगा।

संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत आदेश जो लागू होने वाले मूल कानून को प्रतिस्थापित करने या विषय से संबंधित व्यक्त वैधानिक प्रावधानों की अनदेखी करने के बराबर होगा, साथ ही इन संवैधानिक शक्तियों को किसी भी तरह से किसी भी वैधानिक प्रावधान द्वारा नियंत्रित नहीं किया जा सकता है।

(जे) मनीष गोयल बनाम। रोहिणी गोयल, (2010) 4 एस. सी. सी. 393, यह देखा गया कि अदालतें कानून के शासन को लागू करने के लिए होती हैं न कि

उन आदेशों या निर्देशों को पारित करें जो [2019] 12 एस. सी. आर. के विपरीत हैं।

कानून द्वारा। अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग ऐसे मामले में नहीं किया जा सकता है जहां कानून में कोई आधार नहीं है जो एक इमारत के निर्माण के लिए एक इमारत बना सकता है।

अधिरचना।

(क) ए. बी. भास्कर राव बनाम। सीबीआई, (2011) 10 एससीसी 259, यह था

अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति वैधानिक प्रावधानों द्वारा प्रतिबंधित नहीं है। इसका प्रयोग सहानुभूति के आधार पर और क़ानून के साथ टकराव में नहीं किया जा सकता है।

(1) पंजाब राज्य में v. रफीक मसीह (2014) 8 एस. सी. सी. 883, यह

न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 142 पूरक है और यह मूल प्रावधानों का स्थान नहीं ले सकता है। यह एक ऐसी शक्ति है जो कानून पर समानता को प्राथमिकता देती है। संबंधित भाग यहाँ नीचे निकाला गया हैः

" 12. भारत के संविधान का अनुच्छेद 142 पूरक है -

प्रकृति और मूल प्रावधानों को प्रतिस्थापित नहीं कर सकते हैं, हालांकि वे

कानून में मूल प्रावधानों द्वारा सीमित नहीं हैं। यह एक

एक, राहत के ढालने की प्रकृति में और दूसरा, के रूप में कानून की घोषणा। “ विधि की घोषणा "जैसा कि अनुच्छेद में विचार किया गया है

141 संविधान के बारे में: क्या भाषण स्पष्ट या अनिवार्य रूप से निहित है

देश के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा। इस न्यायालय ने इस प्रश्न पर

संविधान के अनुच्छेद 142 के क्षितिज का विस्तार करते हुए

इसे न्यायालय का एक निर्देश घोषित करना जो इसका रंग बदलता है मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में विशिष्टता के साथ। ”

(जोर दिया गया)

22. यह प्रस्तुत किया जाता है कि कोई विधायी रिक्तता नहीं थी

भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्ति का प्रयोग और इसलिए विशाखा बनाम पर निर्भरता। राजस्थान राज्य, (1997) 6 एससीसी 241 गलत जगह पर है। इसके विपरीत, यह मामला क़ानून द्वारा कवर किया गया था; अर्थात्, उक्त अत्याचार अधिनियम की धारा 18 को धारा 41 के साथ पढ़ा गया।

Cr.PC।

23. अब हम आरक्षित क्षेत्र से संबंधित कानून की जांच करने का प्रस्ताव करते हैं।

विधायिका के लिए आरक्षित क्षेत्र में विधायिका और न्यायिक हस्तक्षेप के लिए। सामान्य कानून और सांविधिक कानून के बीच के अंतर को पुस्तक, न्यायशास्त्र पर सैल्मंड, 12 वें संस्करण; स्वीट एंड मैक्सवेल में निम्नलिखित अंश में सामने लाया गया हैः

" हालांकि, सख्त अर्थों में, कानून का निर्धारण है

एक संप्रभु या अधीनस्थ विधायक द्वारा कानूनी नियम। यहाँ हमें करना होगा।

विधायिकाओं द्वारा बनाए गए कानून को विधायिकाओं द्वारा बनाए गए कानून से अलग करें। अदालतें। विधायक विशुद्ध रूप से भविष्य के लिए नियम निर्धारित कर सकते हैं और

किसी भी वास्तविक विवाद के संदर्भ के बिना; न्यायालय, जहाँ तक

वे कानून बनाते हैं, ऐसा केवल पहले के मामलों में ही कर सकते हैं

उन्हें और केवल जहाँ तक उनके समाधान के लिए आवश्यक है। न्यायिक

कानून बनाना कानूनी विवादों के समाधान के लिए आकस्मिक है; विधायी

कानून बनाना विधायक का केंद्रीय कार्य है।

24. विभिन्न निर्णयों में, इस न्यायालय ने इसके दायरे पर विचार किया है -

न्यायिक समीक्षा और दिशा-निर्देश जारी करना। ऊपर वर्णित निर्देश नीति के दायरे को छूते हैं। बचन सिंह बनाम। पंजाब राज्य, (1980) 2 एस. सी. सी. 684, न्यायालय ने न्यायिक समीक्षा को इस प्रकार निर्धारित और मान्यता दी है:

" 67. इस दृष्टिकोण के पीछे कि एक धारणा है

किसी कानून की संवैधानिकता और उसका खंडन करने की जिम्मेदारी

जो लोग कानून को चुनौती देते हैं, वे न्यायपालिका का तर्क हैं।

प्रतिबंध, न्यायिक समीक्षा की सीमाओं की मान्यता, एक सम्मान

विधायी और न्यायिक कार्यों की सीमाओं के लिए, और

एक तरफ से या अतिक्रमण की रक्षा करने की न्यायिक जिम्मेदारी

अन्य। अदालतों का प्राथमिक कार्य व्याख्या करना और लागू करना है।

उन लोगों की इच्छा के अनुसार कानून जिन्होंने उन्हें बनाया और नहीं

नीति-निर्माण के विधायी क्षेत्र में अतिक्रमण "। नौकरी।

एक न्यायाधीश का निर्णय लेना है न कि कानून बनाना। लॉर्ड डेवलिन के शब्दों में: " न्यायाधीश कानून के रखवाले होते हैं और इनके रखवाले होते हैं।

सीमाएँ बाहरी लोगों के बीच भी नहीं हो सकती हैं।

(जोर दिया गया)

यह देखा गया है कि न्यायालय को इसका उल्लंघन नहीं करना चाहिए

नीति निर्माण का विधायी क्षेत्र।

25. आसिफ हमीद और ओआरएस में। वी. जम्मू और कश्मीर राज्य और

ओआरएस। , 1989 सप. (2) एस. सी. सी. 364, इस न्यायालय ने कहा है कि नीति घोषित करना न्यायालय का काम नहीं है। यह निर्धारित नहीं कर सकता कि क्या बुद्धिमानी या राजनीतिक है। आत्मसंयम न्यायिक शपथ का सार है। न्यायालय ने टिप्पणी कीः

" 17. इनमें सीधे तौर पर शामिल विवाद पर ध्यान देने से पहले

अपील करते हुए, हम अपने बीच के कामकाज पर एक नया नज़र डाल सकते हैं

हमारे संविधान के तहत लोकतंत्र के तीन अंग।

निर्धारित प्रक्रिया का सख्ती से पालन करते हुए कार्य करने और अपने विवेक का प्रयोग करने के लिए इन अंगों के निर्णय पर भरोसा करता है उसमें। लोकतंत्र की कार्यप्रणाली ताकत पर निर्भर करती है।

और इसके प्रत्येक अंग की स्वतंत्रता। विधायिका और कार्यपालिका, लोगों की इच्छा के दो पहलू हैं, उनके पास वित्त सहित सभी शक्तियां हैं। न्यायपालिका के पास तलवार या पर्स पर कोई शक्ति नहीं है; फिर भी, यह सुनिश्चित करने की शक्ति है कि राज्य के उपरोक्त दो मुख्य अंग संवैधानिक सीमाओं के भीतर कार्य करते हैं। यह लोकतंत्र का प्रहरी है। न्यायिक समीक्षा विधायिका और कार्यपालिका द्वारा शक्ति के असंवैधानिक प्रयोग को रोकने के लिए एक शक्तिशाली हथियार है। न्यायिक समीक्षा के बढ़ते क्षितिज ने सामाजिक और आर्थिक न्याय की अवधारणा को अपने दायरे में ले लिया है। जबकि विधायिका और कार्यपालिका द्वारा शक्तियों का प्रयोग न्यायिक संयम के अधीन है, हमारी अपनी शक्ति के प्रयोग पर एकमात्र रोक न्यायिक संयम का स्वयं थोपा गया अनुशासन है।

18. फ्रैंकफर्टर, यू. एस. सुप्रीम कोर्ट के जे. ने ट्रॉप वी के विवादास्पद निर्वासन मामले में असहमति जताई। डलेस, 356 यू. एस. 96 को निम्नानुसार देखा गयाः

" मैडिसन के वाक्यांश में, सभी शक्ति एक अतिक्रमणकारी प्रकृति की है। न्यायिक शक्ति इस मानवीय कमजोरी से अछूती नहीं है। इसे अपने अधिकार से परे अतिक्रमण के खिलाफ भी सतर्क रहना चाहिए।

सीमाएँ, और कम नहीं क्योंकि इस पर एकमात्र संयम है

आत्म-संयम।

दो अवधारणाओं के इस निर्णायक लेकिन सूक्ष्म संबंध की सराहना जो बहुत आसानी से एकजुट हो जाते हैं। इस अंतर का पालन करने के लिए अनुशासित इच्छाशक्ति की आवश्यकता भी कम नहीं है। अलग खड़ा रहना और विवेक की कमी को उपेक्षा करने के लिए प्रबल होने देना आसान नहीं है। मामलों के संचालन में जो बुद्धिमानी है, उसके बारे में स्वयं का दृढ़ दृष्टिकोण है। लेकिन भारत का संघ v का निर्णय देना इस न्यायालय का कार्य नहीं है।

नीति। इसे अपनी सीमाओं के लिए एक कठोर सम्मान का पालन करना चाहिए।

स्वयं की शक्ति, और यह न्यायालय के प्रभाव को इसके लिए प्रतिबंधित करता है

बुद्धिमान या राजनीतिक क्या है, इसकी अपनी धारणाएँ। वह आत्म-संयम है

न्यायिक शपथ के पालन में सार, के लिए

संविधान ने न्यायाधीशों को निर्णय में बैठने के लिए अधिकृत नहीं किया है

कांग्रेस और कार्यकारी शाखा क्या करती है, इसका विवेक। ”

(जोर दिया गया)

न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि यह जो बुद्धिमान है उसकी धारणाओं को प्रभावित नहीं कर सकता है

इटिक। यह विधायिका का काम है कि वह आंकड़ों पर विचार करे और ऐसे पहलुओं पर निर्णय ले।

आसिफ हमीद बनाम में निर्धारित। जम्मू और कश्मीर राज्य

क) एस. सी. चंद्र बनाम में इस न्यायालय द्वारा दोहराया गया है। की स्थिति

चंद, (2007) 8 एस. सी. सी. 279।

26. इंडियन ड्रग्स एंड फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बनाम कामगारों,

एन. ड्रग्स एंड फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड, (2007) 1 एस. सी. सी. 408, न्यायालय ने इस प्रकार कहाः

" 40. अतः न्यायालयों को न्यायिक संयम का प्रयोग करना चाहिए, और

कार्यपालिका या विधायी क्षेत्र में अतिक्रमण न करें। के लिए आदेश पदों का सृजन, इन पदों पर नियुक्ति, नियमितीकरण, निर्धारण

वेतनमान, सेवा में निरंतरता, पदोन्नति आदि सभी कार्यकारी हैं।

या विधायी कार्य, और न्यायाधीशों के लिए कदम उठाना अत्यधिक अनुचित है

मामला-कानून और न्यायिक संयम का दर्शन निर्धारित किया गया है मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा राम में बहुत विस्तार से

मुथुरामलिंगम बनाम। डी. सुपदी। पुलिस, ए. आई. आर. 2005 मैड 1

और हम उसमें व्यक्त किए गए विचारों से पूरी तरह सहमत हैं।

27. डिवीजनल मैनेजर, अरावली गोल्फ क्लब बनाम। चंदर हास,

3) 1 एस. सी. सी. 683, इस न्यायालय ने निम्नानुसार अभिनिर्धारित कियाः

" 18. न्यायाधीशों को न्यायिक संयम बरतना चाहिए और अतिक्रमण नहीं करना चाहिए

कार्यकारी या विधायी क्षेत्र में, भारतीय ड्रग्स और

फार्मास्युटिकल्स लिमिटेड बनाम कामगार (2007) 1 एस. सी. सी. 408 और एस. सी.

चंद्र वी. झारखंड राज्य (2007) 8 एस. सी. सी. 279 (सहमति देखें)

एम. काटजू, जे.) का निर्णय।

19. हमारे संविधान के तहत, विधायिका, कार्यपालिका और

न्यायपालिका के संचालन के सभी के अपने व्यापक क्षेत्र हैं। आम तौर पर,

राज्य के इन तीन अंगों में से किसी के लिए भी यह उचित नहीं है कि - दूसरे के क्षेत्र का अतिक्रमण करें, अन्यथा नाजुक [2019] 12 एस. सी. आर.

संविधान में संतुलन बिगड़ जाएगा, और एक होगा

प्रतिक्रिया "।

28. कुछ जल संकट निवारन समिली और अन्य में। वी. चूहे और ए. एन. आर. की स्थिति , (2013) 12 एस. सी. सी. 226, यह देखा गया है कि न्यायालय विधायी क्षेत्र का अतिक्रमण नहीं करता है। इसे ए नहीं कहा जा सकता हैक्यूलर नीति दूसरी की तुलना में अधिक निष्पक्ष है। न्यायालय ने टिप्पणी कीः

" 12. हमने प्रतिद्वंद्वी को अपना सबसे अधिक चिंतित विचार दिया है। प्रस्तुतियाँ, और हम श्री दीवान के प्रस्तुतिकरण में सार पाते हैं।

हम इस तथ्य से अवगत हैं कि व्यापक अलगाव है

राज्य के विभिन्न अंगों के बीच शक्तियाँ और इसलिए, यह

इस न्यायालय से न्यायिक संयम का प्रयोग करने की अपेक्षा की जाती है और नहीं कार्यपालिका या विधायी क्षेत्र का अतिक्रमण करना। क्या बात?

सार में अपीलार्थी इस न्यायालय से एक आचरण करने के लिए कह रहे हैं

तुलनात्मक अध्ययन करें और मान लें कि जल वितरण की नीति

बुरा होता है। हम डरते हैं; हमारे पास विशेषज्ञता या ज्ञान नहीं है उसी का विश्लेषण करें। इसमें जटिल आर्थिक विकल्प शामिल हैं और हालांकि

यह न्यायालय यह मानता है कि यह विशेषज्ञों का विशेषज्ञ है, लेकिन यह

वितरण के विभिन्न साधनों की कानूनी वैधता का विश्लेषण करना। लेकिन यह किसी विशेष नीति को इससे बेहतर नहीं कह सकता और न ही कहेगा।

अन्य। हमारी राय है कि नीति को प्रभावित करने वाले मामले

और तकनीकी विशेषज्ञता की आवश्यकता को निर्णय पर छोड़ देना बेहतर होगा

जिन्हें इसे संबोधित करने के लिए सौंपा गया है और योग्य हैं। यह

न्यायालय तभी हस्तक्षेप करेगा जब उसे पता चलेगा कि नीति असंगत है संवैधानिक कानूनों के साथ या मनमाना या तर्कहीन है।

(जोर दिया गया)

29. डॉ. सुभाष काशीनाथ महाजन बनाम। की स्थिति

राष्ट्र, (2018) 6 एस. सी. सी. 454, इस न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि मुझे ऐसा कोई निर्देश जारी नहीं किया जाना चाहिए जो सीधे तौर पर कानून के विपरीत हो।

30. केशवानंद भारती बनाम। केरल राज्य, (1973) 4 एससीसी

इस न्यायालय ने निम्नलिखित टिप्पणी की हैः

292. विद्वान महान्यायवादी ने कहा कि प्रत्येक प्रावधान संविधान आवश्यक है; अन्यथा, इसे नहीं रखा जाता

संविधान में। यह बात सच है। लेकिन यह हर भारत संघ v को स्थान नहीं देता है।

उसी स्थिति में संविधान का प्रावधान। वास्तविक स्थिति यह है कि संविधान के प्रत्येक प्रावधान में संशोधन किया जा सकता है बशर्ते कि परिणामस्वरूप संविधान की मूल नींव और संरचना समान रहे। कहा जा सकता है कि मूल संरचना में शामिल हैं -

निम्नलिखित विशेषताएँ:

(3) संविधान का धर्मनिरपेक्ष चरित्र; (4) विधायिका के बीच शक्तियों का पृथक्करण,

कार्यपालिका और न्यायपालिका;

(5) संविधान का संघीय चरित्र।

31. आई. आर. कोएल्हो बनाम राज्य टी. एन., (2007) 2 एस. सी. सी. 1, निम्नलिखित दान किए गए हैं:

" 129. इसके अलावा, केशवानंद मामले में अदालत ने न केवल यह अभिनिर्धारित किया कि अनुच्छेद 31-बी अनुच्छेद 31-ए द्वारा नियंत्रित नहीं है, बल्कि विशेष रूप से उनतीसवें संविधान संशोधन को भी बरकरार रखा, जिसके तहत कुछ केरल भूमि सुधार अधिनियमों को नौवीं अनुसूची में शामिल किया गया था।

उन अधिनियमों को सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निरस्त किए जाने के बाद

कुंजुकुट्टी साहिब बनाम। केरल राज्य (1972) 2 एस. सी. सी. 364। द.

उनतीसवें संशोधन को बनाए रखने का एकमात्र तार्किक आधार है

कि न्यायालय की राय थी कि अनुच्छेद का तंत्र

31 - बी, अपने आप में, वैध है, हालांकि हर बार जब संसद अपनी घटक शक्ति का प्रयोग करते हुए नौवीं अनुसूची में एक कानून जोड़ती है, तो इस तरह की कवायद का बुनियादी ढांचे के आधार पर परीक्षण करना होगा।

संरचना परीक्षण। [शेलट एंड ग्रोवर, जे. जे. को देखें। , पैरा 607 और 608 (7); हेगड़े और मुखर्जी, जे. जे. , पैरा 738-43,744 (8); राय, जे., पैरा 1055-60,1064; जगनमोहन रेड्डी, जे., पैरा 1212 (4); पालेकर, जे., पैरा 1333 (3); खन्ना, जे., पैरा 1522,1536,1537 (xv); मैथ्यू, जे., पैरा 1782; बेग, जे., पैरा 1857 (6); द्विवेदी, जे., पैरा 1994,1995 (4) और चंद्रचूड़, जे., पैरा 2136-41 और 2142 (10)।

130. जैसा कि बताया गया है, यह मानना गलत है कि अनुच्छेद 31-बी

नौवीं अनुसूची के साथ न्यायिक समीक्षा के मामले को बाहर रखा गया है

मौलिक अधिकारों का उल्लंघन। अनुच्छेद 31-बी का प्रभाव है -

में कानून पारित करने के लिए संसद की शक्ति पर एक बंधन हटा दें

मौलिक अधिकारों का उल्लंघन। अनुच्छेद 31-बी के कारण, कारण [2019] 12 एस. सी. आर.

मौलिक अधिकार के उल्लंघन के लिए कार्रवाई उपलब्ध नहीं है क्योंकि विधायी शक्ति पर भाग III द्वारा रखी गई बाधा को हटा दिया गया है और यह अस्तित्व में नहीं है। मौलिक अधिकार के उल्लंघन के आधार पर कार्रवाई के कारण की अनुपलब्धता को न्यायिक समीक्षा के बहिष्कार या निष्कासन के रूप में नहीं माना जा सकता है। नौवीं अनुसूची के साथ पठित अनुच्छेद 31-बी के संचालन के परिणामस्वरूप, न्यायिक समीक्षा के अभ्यास का अवसर उत्पन्न नहीं होता है। लेकिन बहिष्कार या निष्कासन का कोई सवाल ही नहीं है। न्यायिक समीक्षा। दोनों अवधारणाएँ अलग-अलग हैं।

32. भीम सिंह बनाम। भारत संघ, (2010) 5 एस. सी. सी. 538, यह निम्नानुसार थाः

" 77. याचिकाकर्ताओं द्वारा उठाया गया एक अन्य तर्क यह है कि योजना

के तहत शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन करता है

संविधान। शक्तियों के पृथक्करण की अवधारणा, भले ही

जो किसी विशेष संवैधानिक प्रावधान में नहीं पाया जाता है, वह संविधान द्वारा अपनाई गई राजनीति में निहित है। शक्तियों के पृथक्करण का उद्देश्य जवाबदेही की अधिकतम सीमा को प्राप्त करना है

सरकार की प्रत्येक शाखा।

78. इस अवधारणा को समझते समय दो पहलुओं को ध्यान में रखा जाना चाहिए। पहला, शक्तियों का पृथक्करण संविधान की एक अनिवार्य विशेषता है। दो कि आधुनिक शासन में, एक सख्त अलगाव न तो संभव है और न ही वांछनीय है। फिर भी, जब तक जवाबदेही के इस सिद्धांत को संरक्षित नहीं किया जाता है, तब तक शक्तियों के विभाजन का कोई उल्लंघन नहीं होता है। हम उसी निष्कर्ष पर पहुँचते हैं जब हम संवैधानिक पाठ के भीतर स्थिति का आकलन करते हैं। संविधान कार्यों के ओवरलैप को प्रतिबंधित नहीं करता है, लेकिन वास्तव में, संसदीय लोकतंत्र के रूप में कुछ ओवरलैप का प्रावधान करता है। लेकिन यह जो निषेध करता है वह दूसरी शाखा के कार्य का ऐसा अभ्यास है जिसके परिणामस्वरूप कुश्ती होती है

संवैधानिक जवाबदेही का शासन।

***

85. पुनः, ए. के. रॉय बनाम में संविधान पीठ के निर्णय में। भारत संघ चंद्रचूड़, सी. जे. पी. में आयोजित बहुमत के लिए बोलते हुए। 295 , पैरा 23 कहता हैः " हमारा संविधान अमेरिकी संविधान का पालन नहीं करता है शक्तियों के सख्त पृथक्करण का पैटर्न "।

86. इस न्यायालय ने पहले कहा है कि कानून के माध्यम से न्यायिक कार्य को छीनना शक्तियों के पृथक्करण का उल्लंघन होगा। जैसा कि चंद्रचूड़, जे. ने इंदिरा नेहरू गांधी बनाम में उल्लेख किया है। राज नारायण, 1975 पूरक एस. सी. सी. 1: (एस. सी. सी पी. 261, पैरा 689)

भारत संघ v. महाराष्ट्र राज्य [अरुण मिश्रा, जे.]

" 689. ..... विधायिका द्वारा विशुद्ध रूप से और निर्विवाद रूप से एक न्यायिक कार्य का प्रयोग हमारे सहकारी संघवाद के संदर्भ में भी बनाए रखना असंभव है जिसमें शक्तियों का कोई कठोर वितरण नहीं है, लेकिन जो लाभकारी नियंत्रण और संतुलन की एक प्रणाली प्रदान करता है।

ऐसा इसलिए है क्योंकि इस तरह के कानून दोनों के बीच संतुलन को खराब करते हैं।

राज्य के विभिन्न अंग इस प्रकार प्रणाली को नुकसान पहुँचाते हैं

संविधान में जवाबदेही।

87. इस प्रकार, शक्तियों के पृथक्करण के उल्लंघन के लिए परीक्षण आवश्यक है

ठीक यही हो। एक कानून शक्तियों के पृथक्करण का उल्लंघन करेगा, न कि अगर इसके परिणामस्वरूप राज्य की विभिन्न शाखाओं के कार्यों का कुछ अतिव्याप्त हो जाता है, बल्कि अगर यह दूसरी शाखा के एक आवश्यक कार्य को संभाल लेता है जिससे संवैधानिक जवाबदेही में चूक हो जाती है। इसके माध्यम से

यह परीक्षण कि हमें वर्तमान योजना का विश्लेषण करना चाहिए।

33. राज्य में टी. एन. वी. केरल राज्य, (2014) 12 एस. सी. सी. 696, ने निम्नलिखित रूप में देखाः

126.1 . शक्तियों के पृथक्करण के स्पष्ट प्रावधान के बिना भी, शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत भारत के संविधान में एक मजबूत सिद्धांत है। शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत भारतीय संवैधानिक संरचना को सूचित करता है और यह कानून के शासन का एक अनिवार्य घटक है। दूसरे शब्दों में, सत्ता के पृथक्करण का सिद्धांत हालांकि संविधान में स्पष्ट रूप से अंकित नहीं है, लेकिन इसका विस्तार, संचालन और दृश्यता भारतीय संविधान की योजना से स्पष्ट है। संविधान ने तीन अंगों-विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच औपचारिक रेखा खींचे बिना सीमांकन किया है। उस अर्थ में, शक्तियों के पृथक्करण के लिए स्पष्ट प्रावधान के अभाव में भी,

विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच की शक्तियां उन देशों के संविधानों से अलग नहीं हैं जिनमें शक्तियों के पृथक्करण के लिए स्पष्ट प्रावधान हैं।

126.2 . कार्यपालिका और विधायिका से अदालतों की स्वतंत्रता कानून के शासन के लिए मौलिक है और भारतीय संविधान के बुनियादी सिद्धांतों में से एक है। न्यायिक शक्ति का पृथक्करण महत्वपूर्ण है।

भारत के संविधान के तहत संवैधानिक सिद्धांत।

126.3 . तीन अंगों-विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका के बीच शक्तियों का पृथक्करण भी कुछ और नहीं बल्कि संविधान के अनुच्छेद 14 में निहित समानता के सिद्धांतों का परिणाम है।

भारत का संविधान। तदनुसार, न्यायिक शक्ति के पृथक्करण का उल्लंघन अनुच्छेद के तहत समानता का निषेध हो सकता है।

14. इस प्रकार कहा गया है कि शक्तियों के पृथक्करण के उल्लंघन के आधार पर एक कानून को अमान्य किया जा सकता है क्योंकि इस तरह का उल्लंघन संविधान के अनुच्छेद 14 के तहत समानता का निषेध है।

126.4 . उच्च न्यायपालिका (उच्च न्यायालय और सर्वोच्च न्यायालय) को संविधान द्वारा बनाए गए कानून को घोषित करने का अधिकार है।

विधायिका (संसद और राज्य विधानमंडल) अमान्य है यदि यह पाया जाता है कि उसने संवैधानिक सीमाओं का उल्लंघन किया है या यदि उसने संविधान के भाग III में निहित अधिकारों का उल्लंघन किया है।

126.5 . शक्तियों के पृथक्करण का सिद्धांत अंतिम पर लागू होता है

न्यायालयों के निर्णय। विधायिका किसी न्यायालय के किसी भी निर्णय को अमान्य या अप्रभावी घोषित नहीं कर सकती है। हालाँकि, यह एक द्वारा बताए गए दोषों को दूर करने के लिए एक संशोधन अधिनियम पारित कर सकता है

कानून की अदालत या इसके बारे में पता चलने पर। दूसरे शब्दों में, अदालत का निर्णय हमेशा बाध्यकारी होना चाहिए जब तक कि जिन शर्तों पर यह आधारित है, उन्हें इतना मौलिक रूप से परिवर्तित नहीं किया जाता है कि परिवर्तित परिस्थितियों में निर्णय नहीं दिया जा सकता था।

126.6 . यदि विधायिका के पास विषय-वस्तु पर अधिकार है और एक मान्य कानून बनाने की क्षमता है, तो वह किसी भी समय इस तरह का एक मान्य कानून बना सकती है और इसे पूर्वव्यापी बना सकती है। अतः, एक मान्यकारी कानून की वैधता इस बात पर निर्भर करती है कि क्या विधायिका के पास वह क्षमता है जिसका वह विषय-वस्तु पर दावा करती है और क्या सत्यापन कानून बनाने में यह उस दोष को दूर करता है जिसे अदालतों ने मौजूदा कानून में पाया था।

126.7 . विधायिका द्वारा अधिनियमित कानून स्पष्ट रूप से प्रतीत हो सकता है

यदि इसे न्यायिक प्रक्रिया में हस्तक्षेप करने के प्रयास के रूप में दिखाया जाता है, तो ऐसी विधि को शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन होने के कारण अमान्य माना जा सकता है। ऐसी स्थिति में, किसी निर्णय या भारत संघ पर कानून का कानूनी प्रभाव v.

विधायी प्रिस्क्रिप्शन या निर्देश को ध्यान में रखते हुए न्यायिक कार्यवाही की बारीकी से जांच की जानी चाहिए। पूछे जाने वाले सवाल

ये हैं:

(i) क्या विधायी निर्देश या विधायी निर्देश है?

न्यायिक कार्यों में हस्तक्षेप करना?

((ii) क्या कानून तय किए गए मामले को लक्षित करता है या

विवादित कानून को पहले से ही अंत में एक मामले में इसके आवेदन की आवश्यकता होती है तय किया?

(iii) कानून की शर्तें क्या हैं; जिन मुद्दों से यह निपटता है।

और उस निर्णय की प्रकृति जिसने अंतिम रूप प्राप्त कर लिया है?

यदि प्रश्नों (i) और (ii) का उत्तर सकारात्मक है और प्रश्न (iii) में उल्लिखित पहलुओं पर पर्याप्त रूप से विचार किया गया है।

यह स्थापित करता है कि विवादित कानून न्यायिक कार्य में हस्तक्षेप करता है

कार्य, न्यायालय कानून को असंवैधानिक घोषित कर सकता है।

34. स्टॉक बनाम में हाउस ऑफ लॉर्ड्स। फ्रैंक जोन्स (टिपटन), 1978 एल. आर. 331 ने विधायी प्रावधानों की व्याख्या के संबंध में इस प्रकार प्रावधान किया:

" यह बहस करना बेकार है कि क्या इस तरह से कार्य करते हुए, अदालत कानून बना रही है। जैसा कि स्पष्ट रूप से देखा गया है, यह इस बात पर निर्भर करता है कि आपका क्या मतलब है

" इस संदर्भ में "और" कानून "बनाएँ। निर्विवाद बात यह है कि न्यायालय एक ओर कार्यपालिका और विधायिका और दूसरी ओर नागरिक के बीच एक मध्यस्थ प्रभाव है।

(1) आधुनिक विधान एक कठिन और जटिल प्रक्रिया है। जिसे, संसद के किसी सदन में किसी विधेयक को पेश किए जाने से पहले भी, क्रमिक मसौदों पर विचार किया जाता है और सभी परिकल्पनीय स्थितियों पर उनके संभावित प्रभावों को लोगों द्वारा बहुत व्यापक अनुभव प्रदान किया जाता है: न्यायाधीश इस तरह के अनुभव की बराबरी नहीं कर सकता है या ऐसे सभी नतीजों की परिकल्पना नहीं कर सकता है, या तो

प्रशिक्षण या विशिष्ट फोरेंसिक सहायता द्वारा; (2) विधेयक हाउस ऑफ कॉमन्स के प्रभुत्व वाली संसद में संशोधित होने के लिए उत्तरदायी है, जिसके सदस्य उन नागरिकों के प्रति जवाबदेह हैं जो कानून से प्रभावित होंगे: एक अंग्रेजी न्यायाधीश ऐसा नहीं है

(3) कानून के शासन के तहत रहने वाले समाज में नागरिक हकदार हैं -

उनके आचरण को उस अनुसार विनियमित करें जो एक क़ानून ने कहा है, बजाय इसके कि इसका क्या कहना था या अन्यथा क्या कहा जाता यदि एक नई मानी गई स्थिति की परिकल्पना की गई होती;

(4) पत्र और कानून की भावना के बीच एक स्पष्ट विरोधाभास नैतिकता के क्षेत्र में बहुत अच्छी तरह से हो सकता है, लेकिन फोरेंसिक में

प्रक्रिया सेंट जॉन सेंट पॉल की तुलना में एक सुरक्षित मार्गदर्शक है, लोगो सूचना देने वाली भावना है; और यह अधिनायकवादी शासनों में लोगों की अदालतों पर छोड़ दिया जाना चाहिए कि वे प्रतिक्रिया में फोरेंसिक स्थिति से निपटने के लिए कानून का विस्तार करें।

एक आंत प्रतिक्रिया के लिए;

अनुचित विशेषाधिकार या कोई विशेष दुर्भाग्य आवश्यक रूप से या कुछ सुपरवेनिंग जनरल के समर्थन में स्वीकार्य रूप से शामिल

सामाजिक लाभ;

(7) संसदीय मसौदा तैयार करने वाले जानते हैं कि उनका उद्देश्य क्या है। विधायी प्रवर्तक प्राप्त करना चाहता है, और वह सामान्य रूप से और

इस आधार पर इस तरह के दृष्टिकोण को अस्वीकार करने के लिए अपने प्राकृतिक, सामान्य और प्राथमिक अर्थों में उपयुक्त रजिस्टर की भाषा का उपयोग करके उस उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयास करें कि यह एक विसंगति को जन्म देता है और इसमें जटिलता और विघटन को प्रोत्साहित करने के लिए उत्तरदायी है।

प्रारूपण;

(8) संसद आजकल निरंतर सत्र में है ताकि एक अनदेखी और असमर्थनीय अन्याय या विसंगति को कानून द्वारा आसानी से ठीक किया जा सके: जाहिरा तौर पर कठिन मामलों का सामना करने के लिए कानून के न्यायिक विकृति की तुलना में यह कहीं अधिक बेहतर है जिसके परिणामस्वरूप

आम नागरिक और उनके सलाहकार शायद ही जानते हों कि वे कहाँ खड़े हैं। यह सब न्यायिक लापरवाही की वकालत करने के लिए नहीं है: यह केवल सम्मानपूर्वक है

न्यायिक सीमाओं के आत्म-ज्ञान की सराहना करना, दोनों व्यक्तिगत

और संविधान "।

35. इस न्यायालय में संविधान दिवस पर भारत के पूर्व न्यायाधीश श्री एम. एन. वेंकटचलैया द्वारा दिए गए एक व्याख्यान ने नीति के न्यायिक निर्धारण के संदर्भ में भरोसा किया। पंखों की टिप्पणियों पर भरोसा किया गया है:

" यह प्रस्ताव कि "जब कोई कानून नहीं है तो कार्यपालिका को कदम उठाना चाहिए और जब कार्यपालिका भी कार्य नहीं करती है तो न्यायपालिका को ऐसा करना चाहिए" एक आकर्षक निमंत्रण हैः लेकिन यह संवैधानिक रूप से ध्वनि की तुलना में अधिक आकर्षक है। कार्यकारी शक्ति निश्चित रूप से है

विधायी शक्ति के साथ सह-विस्तारित। कानून द्वारा कब्जा नहीं किया गया क्षेत्र कार्यपालिका के लिए खुला है। लेकिन कोई वारंट नहीं है कि के आधार पर

वे प्रावधान जिनमें अदालतें आ सकती हैं और कानून बना सकती हैं। द.

तर्क है कि न्यायालय की निर्णय लेने की बड़ी शक्ति और

कानून की वैधता पर उच्चारण में योजनाओं को तैयार करने और कानून की प्रकृति में निर्देश जारी करने की शक्ति शामिल हो सकती है।

समान रूप से सवाल करने के लिए खुला रहें।

यह आम तौर पर प्राप्तकर्ता के विधेयकों का विपरीत मामला है; विवादों/अधिकारों के विधायी निर्धारण को अवैध और प्रभावशाली माना गया है। अमीरुन्निसा, राम प्रसाद नारायण साही और इंदिरा गांधी कुछ उल्लेखनीय मामले हैं। उसी तर्क से और पारस्परिक तर्क, न्यायिक विधान जो न्यायिक है

नीति और कानून के निर्धारण को उचित ठहराना मुश्किल है।

न्यायशास्त्रीय रूप से। यह बुनियादी संवैधानिक सिद्धांतों में से एक है कि जिस तरह अदालतें व्याख्या की आड़ में कानून बनाने के लिए संवैधानिक रूप से सक्षम नहीं हैं, उसी तरह न तो संसद और न ही राज्य विधानसभाएं अनिवार्य रूप से न्यायिक कार्य कर सकती हैं। संवैधानिक रूप से निर्धारित तीन क्षेत्रों या अधिकार की कक्षाओं में से कोई भी दूसरे पर अतिक्रमण नहीं कर सकता है। यही संविधान की सर्वोच्चता का तार्किक अर्थ है।

लॉर्ड डेवलिन की टिप्पणी दिमाग में आती है; 'अंग्रेजों की अब न्यायाधीशों द्वारा शासित होने की कोई इच्छा नहीं है, जितना वे न्यायाधीशों द्वारा न्याय किए जाने की इच्छा रखते हैं।

उनकी प्रशंसा '।

यह ऐसे उपायों की आवश्यकता और वांछनीयता से इनकार करने के लिए नहीं है। सवाल वैधता और औचित्य में से एक है, रॉबर्ट बोर्क का गहरा विचार दिमाग में आता हैः

" .....न्याय करने की इच्छा जिसका स्वभाव स्पष्ट प्रतीत होता है

जबकि संवैधानिक प्रक्रिया की अवधारणा अमूर्त है, बल्कि शुष्क है, और संयम असंतोषजनक है। प्रलोभन के आगे झुकने के लिए, यह एक बार, एक तत्काल मानवीय समस्या का समाधान करता है, और अमेरिकी नींव में एक हल्की दरार विकसित होती है। एक न्यायाधीश ने यह तय करना शुरू कर दिया है कि एक विधायक को कहाँ होना चाहिए। (द टेम्पटिंग ऑफ

अमेरिका)

9] 12 एस सी आर।

सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट

न्यायिक विधान के लिए किसी भी समर्थन या औचित्य को होना होगा ठोस कानूनी तर्क पर आधारित। इसे इस कारण से उचित नहीं ठहराया जा सकता है कि यह स्वागत योग्य और वांछनीय परिणाम देता है। अगर ऐसा है तो

ऐसा करने पर, कानून वैसा नहीं रहेगा जैसा न्यायमूर्ति होम्स ने इसे नामित किया था, "विचारकों का आह्वान और भावनाओं और संवेदनशीलता का प्रांत बन जाता है"। यह तब व्यक्तिगत पसंद की प्रक्रिया बन जाती है।

तर्कसंगतकरण के बाद। बड़े और छोटे परिसर एक परिणाम की ओर नहीं ले जाते हैं; लेकिन परिणाम बड़े और छोटे परिसर का उत्पादन करता है। यह प्रक्रिया का एक उलट है-वस्तुतः अवधारणा बनाना संवैधानिक न्यायनिर्णयन इसके शीर्ष पर है। यह कानून के लिए है जिसे रॉबर्ट फ्रॉस्ट ने 'फ्री पद्य' कहा, "नेट डाउन के साथ टेनिस"। फिर स्वाभाविक रूप से कोई नियम नहीं हैं, केवल जुनून हैं। कानूनी तर्क वांछित परिणामों के बजाय वैध प्रक्रिया के लिए एक चिंता में निहित है

संवैधानिक लोकतंत्र में न्यायाधीशों को उनकी उचित भूमिका तक सीमित करता है। यह न्यायिक शक्ति और विधायी के बीच की रेखा को चिह्नित करता है।

शक्ति। कानून बनाना, कुछ लोकप्रिय धारणाओं के विपरीत, एक बहुत ही विस्तृत लोकतांत्रिक प्रक्रिया है। अपरिष्कृत जनमत को मापने योग्य विधायी मूल्यों में विभाजित करने के लिए बहुत कुछ करना पड़ता है। संसदीय प्रक्रियाओं
का बहु-स्तरीय फिल्टर और

प्रक्रियाएँ. '

36. ऊपर वर्णित कानूनी सिद्धांतों की चर्चा के आलोक में,

हम पैराग्राफ 83 में जारी किए गए निर्देशों का विज्ञापन करते हैं। दिशा सं। (iii) और (iv) और परिणामी निर्देश संख्या (v) की समीक्षा/वापस लेने की मांग की गई है। निर्देश में निम्नलिखित पहलू शामिल हैंः -

1. लोक सेवक की गिरफ्तारी नियुक्ति प्राधिकारी की मंजूरी के बाद ही हो सकती है।

2. वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक (एसएसपी) की मंजूरी के बाद एक गैर-लोक सेवक की गिरफ्तारी।

3. यदि दर्ज किए जाने वाले कारणों के लिए आवश्यक समझा जाता है तो गिरफ्तारी एक उपयुक्त मामले में हो सकती है। 4. गिरफ्तारी के कारणों की मजिस्ट्रेट द्वारा जांच की जानी चाहिए ताकि आगे हिरासत की अनुमति दी जा सके।

5. डिप्टी कमिश्नर द्वारा प्रारंभिक जांच की जाएगी। एस. पी. स्तर के अधिकारी

यह पता लगाने के लिए कि क्या आरोप एक मामला बनाते हैं और क्या आरोप तुच्छ या प्रेरित नहीं हैं।

6. उपर्युक्त निर्देशों का कोई भी उल्लंघन होगा

अनुशासनात्मक कार्रवाई के साथ-साथ अवमानना के माध्यम से कार्रवाई योग्य।

37. उपरोक्त निर्देशों का विस्तार करने से पहले, यह आवश्यक है

कुछ पहलुओं पर ध्यान देना। इस बात पर कोई विवाद नहीं हो सकता कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों ने लंबे समय तक पीड़ा झेली है, इसलिए उन्हें समान बनाने के लिए भारत के संविधान के अनुच्छेद 15 और 1989 के अधिनियम के प्रावधानों के तहत सुरक्षात्मक भेदभाव की परिकल्पना की गई है।

38. अत्याचार अधिनियम के तहत सभी अपराध संज्ञेय हैं। द.

विवादित दिशा-निर्देश सवारों को गिरफ्तार करने का अधिकार देते हैं। अत्याचार के मामलों में किसी आरोपी को उच्च अधिकारियों की सहमति या प्राधिकरण की नियुक्ति के बिना गिरफ्तार नहीं किया जा सकता है। मौजूदा प्रावधानों के अनुसार, नियुक्ति प्राधिकरण के पास किसी लोक सेवक के संबंध में गिरफ्तारी की मंजूरी देने या रोकने की कोई शक्ति नहीं है।

39. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग वार्षिक

रिपोर्ट 2015-16 ने इस प्रकार त्वरित एफ. आई. आर. दर्ज करने की सिफारिश की हैः

" आयोग ने चिंता के साथ नोट किया है कि

द्वारा अत्याचार के मामलों से निपटने के दौरान प्रक्रियात्मक खामियां अक्सर होती हैं

पुलिस और नागरिक प्रशासन दोनों। न्यायपालिका में देरी हो रही है

मामलों की प्रक्रिया। इसलिए आयोग ने इसकी पहचान की

पुलिस जाँच के दौरान आम तौर पर पाई जाने वाली खामियाँ, और नागरिक प्रशासन निवारक/उपचार योग्य कार्रवाई कर सकता है। एनसीएससी

एससी/एसटी (पी. ओ. ए.) के सही और समय पर आवेदन की सिफारिश करता है।

संशोधन अधिनियम, 2015 और 2016 के संशोधन नियम तथा

सुधार के लिए निम्नलिखितः

8.6. 1 एफ. आई. आर. दर्ज करना-आयोग ने पाया है कि

पुलिस अक्सर प्राप्त करने पर प्रारंभिक जांच का सहारा लेती है

वास्तविक एफ. आई. आर. दर्ज करने से पहले लिखित शिकायत। इसके परिणामस्वरूप,

सुप्रीम कोर्ट के पीड़ितों को अदालतों से निर्देश लेने का सहारा लेना पड़ता है

Cr.P.C की धारा 156 (3) के तहत एफ. आई. आर. दर्ज करने के लिए।

न्यायालय ने भी एक से अधिक अवसरों पर इस बात पर जोर दिया है कि

कि राज्य/केंद्र शासित प्रदेशों की सरकारों को शीघ्र पंजीकरण लागू करना चाहिए आग की "।

(जोर दिया गया)

40. विद्वान महान्यायवादी ने बताया कि न्यायालय द्वारा समीक्षाधीन निर्णय में विचार किए गए आँकड़े इंगित करते हैं कि अधिनियम के तहत 9 से 10 प्रतिशत मामले झूठे पाए गए थे। जालसाजी जैसे अन्य सामान्य अपराधों से संबंधित झूठे मामलों का प्रतिशत है

वर्ष 2016 के लिए एन. सी. आर. बी. के आंकड़ों के अनुसार, तुलनीय, अर्थात् 11.51 प्रतिशत और अपहरण और अपहरण के लिए, यह 8.85 प्रतिशत है। धारा 482 के तहत न्यायालयों द्वारा इसका ध्यान रखा जा सकता है, और यदि कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है, तो न्यायालय हमेशा अग्रिम जमानत देने और उचित मामलों में रद्द करने की शक्ति पर विचार कर सकता है। कम विश्वास के लिए

उन्होंने कहा कि यह आपराधिक न्याय प्रणाली की विफलता का प्रतिबिंब है न कि कानून के दुरुपयोग का। गवाह शायद ही कभी दबे-कुचले वर्ग का समर्थन करने आते हैं, पक्षपातपूर्ण मानसिकता बनी रहती है, और उन पर कई तरीकों से दबाव डाला जाता है, और शिकायतकर्ता भी मुश्किल से साहस जुटाता है।

41. जहाँ तक देश के विभिन्न क्षेत्रों में मौजूदा स्थितियों का सवाल है, हम यह देखने के लिए मजबूर हैं कि एससीएस/एसटी अभी भी संघर्ष कर रहे हैं

आरक्षण, विकास का फल उन तक नहीं पहुंचा है, वे बड़े पैमाने पर समाज के असमान और कमजोर वर्ग बने हुए हैं। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के वर्ग पीड़ित हैं अपमान और दुर्व्यवहार, और वे सदियों से सामाजिक रूप से बहिष्कृत हैं। उनके उत्थान के प्रयासों को नीचे तक फैलाया जाना चाहिए था

उनकी पीड़ाओं को मिटा दें।

देश के विभिन्न हिस्सों में वर्तमान प्रचलित सामाजिक परिदृश्य में ये प्रासंगिक प्रश्न हैं। इसका स्पष्ट उत्तर यह है कि अस्पृश्यता हालाँकि इसे समाप्त करने का इरादा था, लेकिन पिछले 70 वर्षों में यह गायब नहीं हुआ है। हम अभी भी 'ट्रिस्ट विद डेस्टिनी' के साथ प्रयोग कर रहे हैं। अछूतों की दुर्दशा यह है कि उन्हें अभी भी विभिन्न नागरिक अधिकारों से वंचित किया जाता है; गाँवों, दूरदराज के क्षेत्रों में स्थिति बदतर है जहाँ विकास के फल कम नहीं हुए हैं। उन्हें समान नागरिक अधिकार नहीं मिल सकते हैं। अब तक हम संसाधनों की कमी और उचित योजना और उदासीनता के कारण हरिजनों को सफाई के आधुनिक तरीके प्रदान नहीं कर पाए हैं।

क्या वह बराबर के उच्च वर्ग के व्यक्ति से हाथ मिला सकता है पैर? क्या हम मानस और मानवीय गरिमा के उस स्तर तक पहुंचने में सक्षम हुए हैं और जाति के आधार पर भेदभाव को दूर करने में सक्षम हुए हैं? क्या स्वच्छता की झूठी आड़ स्थिति को बचा सकती है, ऐसी स्थिति कैसे बनी रहती है और गायब नहीं हुई है, क्या हम जिम्मेदार नहीं हैं? इसका उत्तर केवल आत्मा की खोज से ही मिल सकता है। हालाँकि, एक बात निश्चित है कि हम वास्तविक अर्थों में अस्पृश्यता को समाप्त करने में सक्षम नहीं हुए हैं जैसा कि परिकल्पना की गई है और हम दलित वर्ग को मौलिक नागरिक अधिकार और सुविधाएँ, जीवन की मितव्ययी सुख-सुविधाएँ प्रदान करने में सक्षम नहीं हुए हैं जो जीवन को जीने लायक बनाते हैं। इससे भी अधिक, उन आदिवासियों के लिए जिन्हें कुछ स्थानों पर अभी भी अलग-थलग रखा गया है क्योंकि हम सुरक्षा के लिए काफी राशि खर्च करने के बावजूद उन्हें बुनियादी सुविधाएं, शिक्षा और जीवन के किफायती आराम भी प्रदान नहीं कर पाए हैं, यह कब तक जारी रहेगा। क्या उन्हें यथास्थिति बनाए रखनी होगी और सभ्य समाज का मनोरंजन करना होगा? चाहे संस्कृति के संरक्षण की आड़ में, वे वंचित हैं

विकास के फल, और वे पारंपरिक अधिकारों के उल्लंघन का सामना करते हैं? 43. खड़क सिंह बनाम हिमाचल प्रदेश राज्य, ए. आई. आर. 1963 एस. सी. 1295 में, इस न्यायालय ने कहा है कि जीवन का अधिकार केवल एक जानवर का अस्तित्व नहीं है। अनुच्छेद 21 के तहत, जीवन के अधिकार में गरिमा के साथ जीने का अधिकार शामिल है। बुनियादी मानव गरिमा का तात्पर्य है कि सभी व्यक्ति हैं

सभी मामलों में समान मानव के रूप में माना जाता है और एक अछूत, दलित और शोषण के लिए वस्तु के रूप में नहीं माना जाता है। इसका यह भी तात्पर्य है कि वे जाति के आधार पर अभिजात वर्ग की सेवा करने के लिए पैदा नहीं हुए हैं। जातिगत भेदभाव की जड़ें गहरी थीं, इसलिए इसे दूर करने के लिए लगातार प्रयास किए जा रहे हैं, लेकिन फिर भी, हमें वास्तविक लक्ष्य प्राप्त करना है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हम व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयासों के कारण आंशिक रूप से सफल हुए हैं।

44. लोगों द्वारा गुणवत्तापूर्ण जीवन का आनंद लेना संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत गारंटीकृत अधिकार का सार है, जैसा कि संविधान में देखा गया है।

हिच लाल तिवारी बनाम। कमला देवी, (2001) 6 एससीसी 496। मानव गरिमा के साथ जीने का अधिकार जीवन के अधिकार में शामिल है जैसा कि फ्रांसिस कोरली मुलिन बनाम में देखा गया है। केंद्र शासित प्रदेश दिल्ली, प्रशासक, ए. आई. आर 1981 एस. सी. 746, ओल्गा टेलिस बनाम। बॉम्बे कॉर्पोरेशन, ए. आई. आर. 1986 एस. सी. 180। सामान्य अन्याय, प्रदूषण, पर्यावरण क्षरण, कुपोषण, दलितों का सामाजिक बहिष्कार मानवाधिकारों के उल्लंघन के उदाहरण हैं जैसा कि इस न्यायालय ने पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज v. भारत संघ, (2005) 2 एस. सी. सी. 436:

" 34. इस प्रश्न की जांच दूसरे कोण से भी की जा सकती है। द.

मानवाधिकारों के पुलिस अधिकारी का ज्ञान या अनुभव उल्लंघन मानवाधिकार उल्लंघन के केवल एक पहलू का प्रतिनिधित्व करता है और

इसका संरक्षण, अर्थात्, अपराध से उत्पन्न होना। मानवाधिकार उल्लंघन विभिन्न रूपों के होते हैं जो पुलिस की बर्बरता के अलावा होते हैं।

लैंगिक अन्याय, प्रदूषण, पर्यावरण क्षरण,

कुपोषण, दलितों का सामाजिक बहिष्कार आदि। एक पुलिस अधिकारी कर सकता है केवल एक पहलू का अनुभव होने का दावा करें। ऐसा नहीं है कि

अनुभाग की आवश्यकता "।

(जोर दिया गया)

45. गरिमा के साथ जीने का अधिकार है और उसके साथ मरने का भी अधिकार है।

गरिमा। अनुच्छेद 21 के तहत मानवाधिकारों के उल्लंघन के लिए मुआवजे का अनुदान उन सह-अभियुक्तों में से एक है जिसने मुआवजे के प्रावधानों में वैधानिक अभिव्यक्ति पाई है, जिसे 1989 के अधिनियम के प्रावधानों के तहत अपराध किए जाने की स्थिति में भुगतान किया जाना है। एक अच्छी प्रतिष्ठा व्यक्तिगत सुरक्षा का एक तत्व है और संविधान द्वारा जीवन, स्वतंत्रता और संपत्ति के आनंद के अधिकार के साथ समान रूप से संरक्षित है। इसलिए, इसे एक आवश्यक तत्व माना गया है उमेश कुमार बनाम में इस न्यायालय द्वारा देखे गए अनुच्छेद 21 के तहत एक नागरिक के जीवन का अधिकार। आंध्र प्रदेश राज्य, (2013) 10 एस. सी. सी. 591, किशोर समरिते बनाम। उत्तर प्रदेश राज्य, (2013) 2 एस. सी. सी. 398 और सुब्रमण्यम स्वामी बनाम। भारत संघ, (2016) 7 एस. सी. सी. 221. 1989 के अधिनियम के प्रावधान, संक्षेप में, भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 के विभिन्न पहलुओं को शामिल करते हैं।

46. वे कृषि क्षेत्रों में बंधुआ या जबरन श्रम करते हैं, जो

प्रयासों के बावजूद निरस्त नहीं किया जाता है। कुछ क्षेत्रों में महिलाओं के साथ गरिमा और सम्मान के साथ व्यवहार नहीं किया जाता है और विभिन्न रूपों में उनका यौन शोषण किया जाता है। हम सीवर श्रमिकों को कक्षों में जहरीली गैसों के कारण मरते हुए देखते हैं। वे मौत के जाल की तरह हैं। हम सीवर चैंबर में प्रवेश करने के लिए मास्क और ऑक्सीजन सिलेंडर उपलब्ध नहीं करा पाए हैं, हम उन्हें इस तरह से मरने के लिए नहीं छोड़ सकते हैं और अधिकारियों/मशीनरी से संबंधित यातनापूर्ण दायित्व से बच नहीं सकते हैं, और वे अभी भी अपने नागरिक अधिकारों का आनंद लेने के मामले में समाज के भीतर भेदभाव कर रहे हैं और मानव गरिमा के साथ नहीं रह सकते हैं।

47. भारत का संविधान कानून के समक्ष समानता प्रदान करता है।

अनुच्छेद 14 में निहित प्रावधानों के तहत। भारत संघ का अनुच्छेद 15 (4) v.

संविधान में कोई भी विशेष प्रावधान करने के लिए एक अपवाद बनाया गया है

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्य दूसरों की तुलना में और विशेष रूप से तथाकथित उच्च जातियों/सामान्य श्रेणी के लिए नुकसानदेह स्थिति में हैं। इस प्रकार, उनके साथ अधिक भेदभाव नहीं किया जा सकता है, इसलिए जब हम पृष्ठभूमि के परिप्रेक्ष्य में एक नज़र डालते हैं। क्या? विधायिका वैध रूप से काम नहीं कर सकती है, अदालतों द्वारा व्याख्यात्मक प्रक्रिया द्वारा नहीं किया जा सकता है।

48. विशेष कानून, अर्थात 1989 का अधिनियम, अधिनियमित किया गया है और इसके प्रावधानों को अधिक प्रभावी बनाने के लिए 2016 में इसमें संशोधन भी किया गया है। मुकदमों की त्वरित सुनवाई के लिए विशेष अभियोजक प्रदान किए जाने हैं। पीड़ितों के पुनर्वास, गवाहों की सुरक्षा और उससे जुड़े मामलों के लिए भी प्रोत्साहन प्रदान किए जाते हैं।

49. ऐसी कोई धारणा नहीं है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्य कानून के प्रावधानों का दुरुपयोग कर सकते हैं।

वर्ग और इसका सहारा उच्च जातियों के सदस्य या अभिजात वर्ग के सदस्य नहीं लेते हैं। झूठी रिपोर्ट दर्ज करने के लिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि किसी व्यक्ति की जाति इसका कारण है। यह मानव विफलता के कारण है न कि जाति कारक के कारण। जाति को इस तरह के कृत्य के लिए जिम्मेदार नहीं ठहराया जा सकता है। दूसरी ओर, पिछड़ेपन के कारण अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों में शायद ही पहले दर्ज करने का साहस हो।

सूचना रिपोर्ट, बहुत कम, गलत है। यदि यह गलत पाया जाता है/[2019] 12 एस. सी. आर.

अप्रमाणित, यह दोषपूर्ण जांच या जाति कारक के बावजूद मानवीय विफलताओं सहित अन्य विभिन्न कारणों से हो सकता है। कुछ ऐसे मामले हो सकते हैं जो झूठे हो सकते हैं जो न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप का आधार हो सकते हैं, लेकिन इस तरह के दुरुपयोग के कारण कानून को बदला नहीं जा सकता है। ऐसी स्थिति में, Cr.PC की धारा 482 के तहत कार्यवाही में ध्यान रखा जा सकता है।

50. राष्ट्रीय अपराध अभिलेख ब्यूरो, गृह मंत्रालय के आंकड़ों को भारत संघ की ओर से इंगित किया गया है जो यह इंगित करता है कि वर्ष 2016 में 1989 के अधिनियम के तहत 47,000 से अधिक मामले दर्ज किए गए थे। यह संख्या चिंताजनक है और यह नहीं कहा जा सकता कि यह अधिनियम के प्रावधानों के दुरुपयोग के परिणाम के कारण है।

51. वास्तव में, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों ने लंबे समय तक पीड़ा झेली है, इसलिए, यदि हम प्रदान नहीं कर सकते हैं

उनके लिए फायदेमंद सुरक्षात्मक भेदभाव के कारण, हम उन्हें ऐसी स्थिति में नहीं रख सकते हैं जो असमानता को बढ़ाकर और हमारे संविधान की भावना के खिलाफ उन्हें नुकसान पहुंचा रही हो। यह.

उन सभी के साथ झूठा या धोखेबाज़ व्यक्ति के रूप में व्यवहार करना बुनियादी मानवीय गरिमा के खिलाफ होगा और ऐसी शिकायत करने वाली चींटी की हर शिकायत को संदेह के साथ नहीं देखा जा सकता है। प्रत्यक्षदर्शी उनके पक्ष में बोलने के लिए सामने नहीं आते हैं। वे शायद ही उच्च जाति के खिलाफ बोलने का साहस जुटाते हैं, इसलिए गवाहों की सुरक्षा और पीड़ितों के पुनर्वास के लिए संशोधन के माध्यम से प्रावधान किए गए हैं। सभी मनुष्य समान हैं।

उनकी कमजोरियों में भी। एससी का इलाज करने के लिए। और एसटीएस। उन व्यक्तियों के रूप में जो अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधानों के तहत बदला लेने के लिए या अन्यथा उनके अधीन होने की स्थिति में उन्हें उपलब्ध कराए गए मौद्रिक लाभ के रूप में झूठी रिपोर्ट दर्ज करने के लिए प्रवण हैं।

इस तरह का अपराध मौलिक मानव समानता के खिलाफ होगा। यह अनुमान नहीं लगाया जा सकता है कि ऐसे वर्ग का कोई व्यक्ति खुद को चोट पहुँचाएगा और केवल मौद्रिक लाभ प्राप्त करने या बदला लेने के लिए झूठी रिपोर्ट दर्ज कराएगा। यदि ऐसा माना जाता है, तो इसका मतलब चोट के अपमान को जोड़ना होगा, केवल इस तथ्य से कि व्यक्ति प्रावधानों का दुरुपयोग कर सकता है, इसका आधार नहीं हो सकता है

कक्षा के साथ संदेह के साथ व्यवहार करें। यह मानवीय विफलताओं के कारण है, जाति कारक के कारण नहीं। तेजाब फेंकने, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति की महिलाओं के यौन उत्पीड़न, बलात्कार, हत्या आदि के मामलों में मौद्रिक लाभ प्रदान किए जाते हैं। ऐसे मामलों में तुरंत एफ़. आई. आर. दर्ज की जानी चाहिए। 52. यह एक दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति है कि देश में अभी भी जाति व्यवस्था प्रचलित है और लोग मलिन बस्तियों में रहते हैं, विशेष रूप से,

गगनचुंबी इमारतों के नीचे, और वे ऐसी इमारतों के निवासियों की सेवा करते हैं।

53. एस. सी./एस. टी. श्रेणी द्वारा दर्ज की गई रिपोर्ट को प्रारंभिक जांच के बाद ही पंजीकृत किया जाएगा।

डी. द्वारा जाँच। एस. पी., जबकि Cr.PC के तहत संज्ञेय अपराध से संबंधित शिकायत तुरंत दर्ज की जानी चाहिए। इसका मतलब यह होगा कि उच्च जाति द्वारा एक रिपोर्ट तुरंत दर्ज की जानी चाहिए और गिरफ्तारी तुरंत की जा सकती है, जबकि 1989 के अधिनियम के तहत किसी अपराध के मामले में, यह एक शर्त होगी। यह अनुच्छेद 15,17 और 21 में संविधान के तहत परिकल्पित अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सदस्यों के साथ किए गए सुरक्षात्मक भेदभाव का विरोध करेगा और उनके साथ इस तरह का व्यवहार करने के समान होगा -

54. (iii) और (iv) में दिशानिर्देश 1989 के अधिनियम की धारा 18 में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए जारी किए गए प्रतीत होते हैं; जबकि एम. पी. बनाम राज्य के मामले में इस न्यायालय द्वारा एक उद्देश्यपूर्ण व्याख्या द्वारा पर्याप्त सुरक्षा उपाय प्रदान किए गए हैं। आर. के. बलोथिया, (1995) 3 एस. सी. सी. 221। इस न्यायालय का सुसंगत दृष्टिकोण है कि यदि प्रथम दृष्टया मामला 1989 के अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिनियम के प्रावधानों को आकर्षित करने वाला नहीं बनाया गया है, तो उस मामले में अग्रिम जमानत देने पर धारा 18 के तहत बनाया गया प्रतिबंध आकर्षित नहीं होता है। इस प्रकार, अधिनियम के प्रावधानों के दुरुपयोग का उद्देश्य उपरोक्त निर्णय द्वारा ध्यान रखा जाना है। कर्तार सिंह (उपरोक्त) मामले में, इस न्यायालय की एक संविधान पीठ ने निर्धारित किया है कि अग्रिम जमानत के उक्त अधिकार को छीनना भारत के संविधान के अनुच्छेद 21 का उल्लंघन नहीं होगा। इस प्रकार, प्रथम दृष्टया यह प्रतीत होता है कि प्रावधानों के दुरुपयोग के मामले में, ऊपर उल्लिखित निर्णय में पर्याप्त सुरक्षा उपाय प्रदान किए गए हैं।

55. इसके अलावा जारी किए गए निर्देश (iii) और (iv) मामलों की जांच में देरी कर सकते हैं। नियमों में किए गए संशोधन के अनुसार

वर्ष 2016 में, अभियोजन को समय पर शुरू करने के लिए एक आरोप पत्र दायर किया जाना है। जारी किए गए निर्देशों से अधिनियम/नियमों के तहत समय पर बनाई गई योजना में देरी होने की संभावना है।

पुनः में - नियुक्ति प्राधिकारी की मंजूरीः

56. लोक सेवकों के संबंध में, इसमें निहित प्रावधान

धारा 197, Cr.PC [2019] 12 एस. सी. आर. के संज्ञान को प्रतिबंधित करके सुरक्षा प्रदान करती है।

नियुक्ति प्राधिकारी की मंजूरी के बिना अपराध और गिरफ्तारी के चरण में प्रावधान लागू नहीं किया जा सकता है। यह धारा 197, Cr.PC की भावना के खिलाफ होगा। धारा 41, Cr.PC प्रत्येक पुलिस अधिकारी को संज्ञेय अपराध के मामले में गिरफ्तारी करने के लिए अधिकृत करती है और Cr.PC की धारा 2 (c) के संदर्भ में संज्ञेय अपराध की परिभाषा ही वह है जिसके लिए पुलिस अधिकारी बिना गिरफ्तारी के गिरफ्तार कर सकते हैं।

आदेश दिया।

57. यदि किसी व्यक्ति को यह आशंका होती है कि उसे गिरफ्तार किया जा सकता है, परेशान किया जा सकता है और गलत तरीके से फंसाया जा सकता है, तो वह उच्च न्यायालय का रुख कर सकता है।

धारा 482 के तहत एफ. आई. आर. को रद्द करना जैसा कि उड़ीसा राज्य बनाम में देखा गया है। देवेंद्र नाथ पाधी, (2005) 1 एस. सी. सी. 568।

58. ऊपर उल्लिखित दिशा-निर्देश जारी करते समय लोक सेवक की गिरफ्तारी के लिए प्राधिकरण की नियुक्ति की मंजूरी अनिवार्य कर दी गई है।

अधिनियम के प्रावधानों के तहत, उस पर 1989 के अधिनियम के तहत अपराध करने का आरोप है। किसी लोक सेवक को गिरफ्तार करने के लिए नियुक्ति प्राधिकरण की अनुमति की वैधानिक रूप से परिकल्पना नहीं की गई है; यह उस क्षेत्र का अतिक्रमण है जो विधायिका के लिए आरक्षित है। यह निर्देश विधायी रंग के जनादेश के बराबर है जो एक ऐसा क्षेत्र है जो न्यायालयों के लिए निर्धारित नहीं है।

59. यह निर्देश भेदभावपूर्ण है और कई कानूनी जटिलताओं का कारण बनेगा। किस आधार पर नियुक्ति प्राधिकरण अनुदान देगा?

लोक सेवक को गिरफ्तार करने की अनुमति? जब जाँच पूरी नहीं होती है, तो यह कैसे निर्धारित किया जा सकता है कि लोक सेवक को गिरफ्तार किया जाना है या नहीं? क्या ऐसे मामले में केस डायरी को देखने के लिए प्राधिकरण की नियुक्ति के लिए उचित होगा जहां किसी ऐसे अपराध में अभियोजन के लिए इसकी मंजूरी की आवश्यकता नहीं हो सकती है जो आधिकारिक कर्तव्य के निर्वहन में नहीं हुआ है। 1989 के अधिनियम के तहत हर मामले में लोक सेवक की गिरफ्तारी की मंजूरी के लिए नियुक्ति प्राधिकरण से संपर्क करने में पर्याप्त समय लगने की संभावना है। नियुक्ति प्राधिकारी को किए गए अपराध की जमीनी वास्तविकताओं के बारे में पता नहीं होना चाहिए और कभी-कभी जाँच की आगे की प्रगति सुनिश्चित करने के लिए तुरंत गिरफ्तारी आवश्यक हो जाती है। अक्सर गिरफ्तारी के बिना जांच पूरी नहीं की जा सकती है। अनुमोदन के प्रश्न पर निर्णय लेने के लिए नियुक्ति प्राधिकारी के समक्ष कोई सामग्री नहीं हो सकती है। यह तय करना कि किसी लोक सेवक को गिरफ्तार किया जाना चाहिए या नहीं, प्राधिकरण की नियुक्ति का कार्य नहीं है, यह पूरी तरह से अतिरिक्त वैधानिक है। यदि नियुक्ति प्राधिकारी भारत संघ v रखता है।

कि एक लोक सेवक को गिरफ्तार नहीं किया जाना है और अनुमोदन से इनकार कर दिया जाता है, क्या होगा, क्योंकि अग्रिम जमानत देने का कोई प्रावधान नहीं है। यह न्यायालय के कार्यों को छीनने के समान होगा। यह तय करना कि क्या कोई अभियुक्त धारा 438 के तहत जमानत का हकदार है, यदि कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं बनता है या धारा 439 के तहत यह अदालत का कार्य है। गिरफ्तारी न करने के लिए प्राधिकारी की नियुक्ति का निर्देश 1989 के अधिनियम के प्रावधानों के साथ टकराव पैदा कर सकता है और यह वैधानिक आधार के बिना है।

60. जारी दिशा-निर्देशों से विसंगत स्थिति पैदा हो सकती है

कई मामलों में। यदि नियुक्ति प्राधिकारी का विचार है कि चूंकि कोई प्रथम दृष्टया मामला नहीं है, तो पदधारी को गिरफ्तार नहीं किया जाना है, कई जटिलताएं उत्पन्न हो सकती हैं। एक अपराधी की गिरफ्तारी के लिए, शायद ए

लोक सेवक, यह Cr.PC के सामान्य कानून का प्रावधान नहीं है कि नियुक्ति प्राधिकारी की अनुमति आवश्यक है। आई. पी. सी. और आई. डी. 1 के तहत गिरफ्तारी के मामले में किसी लोक सेवक को ऐसा कोई वैधानिक संरक्षण प्रदान नहीं किया गया है, क्योंकि 1989 के अधिनियम के तहत मामलों में इस तरह के अधिकार को लागू करना भेदभावपूर्ण होगा। केवल आधिकारिक कर्तव्यों के निर्वहन के मामले में, कुछ अपराध किया गया प्रतीत होता है, उस मामले में, मुकदमा चलाने की मंजूरी की आवश्यकता हो सकती है और अन्यथा नहीं। यदि अधिनियम आधिकारिक कर्तव्य निर्वहन के दायरे से बाहर है, तो ऐसी मंजूरी की आवश्यकता नहीं है।

61. नियुक्ति प्राधिकारी संज्ञेय, गैर-जमानती अपराध और पुलिस अधिकारी द्वारा की गई जांच के मामले में प्राथमिकी पर नहीं बैठ सकता है; यह कार्य नियुक्ति प्राधिकारी को प्रदान नहीं किया जा सकता है। जैसा कि इसकी परिकल्पना Cr.P.C या 1989 के अधिनियम में नहीं की गई है। इस प्रकार, इस अधिकार को 1989 के अधिनियम के तहत मामलों के संबंध में लागू नहीं किया जा सकता है, यह हो सकता है कि अधिनियम के प्रावधानों का कभी-कभी दुरुपयोग किया जाता है, प्राधिकरण नियुक्त करके गिरफ्तारी के अनुमोदन की शक्ति का प्रयोग पूरी तरह से किया जाता है।

इसके अलावा यह विधानमंडल के लिए आरक्षित क्षेत्र का अतिक्रमण करता है और सामान्य कानून के प्रावधानों के प्रतिकूल है क्योंकि सामान्य कानून के तहत ऐसे किसी भी अधिधारक की परिकल्पना नहीं की गई है। 62. यह मानते हुए कि अभियुक्त को गिरफ्तार करने के लिए प्राधिकरण नियुक्त करने की अनुमति प्राप्त करना अनुज्ञेय है, स्थिति को और खराब कर देगा।

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों की स्थिति। यदि उन्हें विशेष सुरक्षा नहीं दी जानी है, तो उन्हें आगे नुकसानदेह स्थिति में नहीं रखा जाना चाहिए। शर्त का कार्यान्वयन उन्हें हतोत्साहित कर सकता है और पुलिस से संपर्क करने से भी रोक सकता है और [2019] 12 एस. सी. आर.

अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के सभी सदस्यों पर संदेह की छाया डालना, जिसे संवैधानिक रूप से परिकल्पित नहीं कहा जा सकता है।

इस बात पर विचार करें कि क्या अभियुक्त को गिरफ्तार किया जा सकता है या नहीं और गिरफ्तारी की अनुमति देने या अस्वीकार करने के लिए नियुक्ति प्राधिकारी द्वारा दर्ज किए गए कारणों पर विचार करें। आपराधिक जाँच में हस्तक्षेप करना नियुक्ति प्राधिकारी का कार्य नहीं है। यदि सीमा पर है, तो नियुक्ति की मंजूरी गिरफ्तारी के लिए अधिकार आवश्यक है, अधिनियम का उद्देश्य ही विफल होने की संभावना है। विभिन्न जटिलताएँ उत्पन्न हो सकती हैं। जाँच निर्दिष्ट समय के भीतर पूरी नहीं की जा सकती है, और न ही परीक्षण परिकल्पना के अनुसार पूरा किया जा सकता है। 1989 के अधिनियम में देरी दलित वर्ग की दुर्दशा को और बढ़ा देगी।

संदर्भ में: गैर-लोक सेवक के मामले में एसएसपी द्वारा गिरफ्तारी की मंजूरी: 63. अन्य बातों के साथ-साथ, जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, हमारा मानना है कि गिरफ्तारी से पहले एसएसपी की मंजूरी की आवश्यकता है।

ऐसे मामले में वारंट नहीं किया जाता है क्योंकि यह भेदभावपूर्ण होगा और अधिनियम के तहत परिकल्पित सुरक्षात्मक भेदभाव के खिलाफ होगा। इसके अलावा, ऐसे कोई दिशा-निर्देश लागू नहीं हो सकते, जो विधायी हों। जब अग्रिम जमानत का कोई प्रावधान नहीं है, तो जाहिर तौर पर गिरफ्तारी करनी होगी। इसके बिना

किसी भी अधिकारी की ईमानदारी पर संदेह करते हुए, इसे पदधारी के मधुर विवेक पर नहीं छोड़ा जा सकता है, चाहे वह कितना भी उच्च क्यों न हो। अनुमोदन का अर्थ यह होगा कि यह भी आदेश दिया जा सकता है कि व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जाना है तो जांच कैसे पूरी की जा सकती है जब किसी पदधारी की गिरफ्तारी आवश्यक है, यह समझ में नहीं आता है। अभियुक्त की गिरफ्तारी के लिए ए एसएसपी के अनुमोदन की शर्त को अनिवार्य नहीं बनाया जा सकता था, इससे 1989 के अधिनियम के तहत मामलों में देरी हो सकती है।

मजिस्ट्रेट से कारणों की जांच करने की आवश्यकता

64. इस न्यायालय द्वारा जारी दिशा-निर्देशों के अनुसार, लोक सेवक को प्राधिकरण की नियुक्ति द्वारा अनुमोदन के बाद गिरफ्तार किया जा सकता है। एसएसपी की मंजूरी के बाद गैर-लोक सेवक। मजिस्ट्रेट को आगे की अनुमति देने के लिए इस प्रकार दर्ज किए गए कारणों पर विचार करना होगा।

नजरबंदी। अनुमोदन नहीं दिए जाने के मामले में, इस अभ्यास में भारत का संघ v है।

नहीं लिया गया। जब अपराध 1989 के अधिनियम के तहत दर्ज किया जाता है, तो कानून को अपना काम करना चाहिए, चाहे वह लोक सेवक हो या गैर-लोक सेवक, गिरफ्तारी पर किसी भी अतिरिक्त बंधन की आवश्यकता नहीं है। अन्यथा भी, क्योंकि हमने गिरफ्तारी की मंजूरी को मंजूरी नहीं दी है

नियुक्ति प्राधिकारी/एस. एस. पी. , परिणामस्वरूप मजिस्ट्रेट द्वारा कारणों को दर्ज करने और जांच करने का निर्देश रद्द कर दिया जाता है।

प्रक्रिया के मामले में उच्च जाति के सदस्यों द्वारा दर्ज की गई शिकायतों के मामले में नुकसानदेह स्थिति, क्योंकि बाद में ऐसी कोई प्रारंभिक जांच आवश्यक नहीं है, इस मामले को देखते हुए अपराध दर्ज करने के लिए प्रारंभिक जांच करना आवश्यक नहीं होना चाहिए। 1989 का अत्याचार अधिनियम।

66. जातिविहीन समाज का निर्माण ही अंतिम लक्ष्य है। हम इस पवित्र आशा के साथ समापन करते हैं कि एक ऐसा दिन आएगा, जैसा कि संविधान निर्माताओं ने उम्मीद की थी, जब हमें ऐसे किसी कानून की आवश्यकता नहीं होगी

1989 के अधिनियम की तरह, और अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग के लिए किसी भी आरक्षण का प्रावधान करने की कोई आवश्यकता नहीं है, और सभी मामलों में मनुष्य का केवल एक वर्ग समान है और कोई जाति प्रणाली या अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति या अन्य पिछड़ा वर्ग का वर्ग मौजूद नहीं है, सभी नागरिक मुक्त हैं और संवैधानिक लक्ष्य के अनुसार समान हो जाते हैं।

67. हमें संदेह नहीं है कि निर्देश विधायिका के लिए आरक्षित क्षेत्र का अतिक्रमण करते हैं और सुरक्षात्मक 1178 की अवधारणा के खिलाफ हैं।

संविधान के अनुच्छेद 15 (4) के तहत दलित वर्गों के पक्ष में भेदभाव और भारत के संविधान के अनुच्छेद 142 के तहत शक्तियों के प्रयोग के लिए इस न्यायालय द्वारा निर्धारित मापदंडों के भीतर भी अस्वीकार्य। नतीजतन, हमारा मानना है कि दिशा संख्या। (iii) और (iv) इस न्यायालय द्वारा जारी किए जाने के योग्य हैं और इसके द्वारा वापस लिए जाते हैं और परिणामस्वरूप हम मानते हैं कि निर्देश संख्या (v) भी गायब हो जाता है। समीक्षा

बी.

याचिकाओं को ऊपर उल्लिखित सीमा तक अनुमति दी जाती है।

68. हस्तक्षेप आदि के संबंध में सभी लंबित आवेदन मौजूद हैं।

निकाल दिया।

दिव्या पांडे